दिवाकर्ल तिरुपति शास्त्री (1872-1920) और चेल्लपल्लि वेंकटशास्त्री (1870-1950) दोनों कवि, नाटककार तथा सफल अनुवादक हैं। उन्होंने करीब एक सौ से अधिक पुस्तकें तेलुगु और संस्कृत में लिखी हैं। वे तेलुगु के प्रसिद्ध कवि हैं। उन दोनों का नाम मिलाकर उन्हें तिरुपति वेंकट कवुलु कहा जाता है। वे एक दूसरे की पूर्ति करते हैं।

वे अवधान कला में सक्षम हैं। उन्होंने तेलुगु कविता को मामूली जनता तक पहुँचाया है। वे साहित्यिक "समस्याओं" को तत्काल पूरा करते हैं। उच्च से उच्च तथा सामान्य से सामान्य बातें उनकी कथा तथा काव्य वस्तु रहती है।

वे एक दर्जन से ज्यादा नाटक लिख चुके है, वे नाटक आज भी रंगमंच पर प्रदर्शित होते हैं और इतने लोकप्रिय हैं कि जनता उन नाटकों को देखने हर हमेशा तयार रहती है। इन्हों ने तेलुगु नाटक साहित्य को नयी दिशा दी है। आज भी 400 तक परिवार इनके नाटकों का प्रदर्शन करके अपनी जीविका चलाते हैं। तिरुपति वेंकट कवुलु ने कालिदास, रवींद्रनाथ ठाकूर जैसे महान कवियों की कृतियों का तेलुगु में अनुवाद प्रस्तुत किया है।

साल्व कृष्ण मूर्ति प्रेसिडेन्सी कालिज, मद्रास के तेलुगु आचार्य हैं। इस पुस्तक के द्वारा तेलुगु से अनभिज्ञ विद्वानों को तिरुपति वेंकट कवुलु से परिचित कराने का सुंदर प्रयास किया गया है।

Tirupati Venkata Kavulu (Hindi), Rs. 15
ISBN 81–7201–314–0

साल्व कृष्णमूर्ति

तिरुपति वेंकट कवुलु

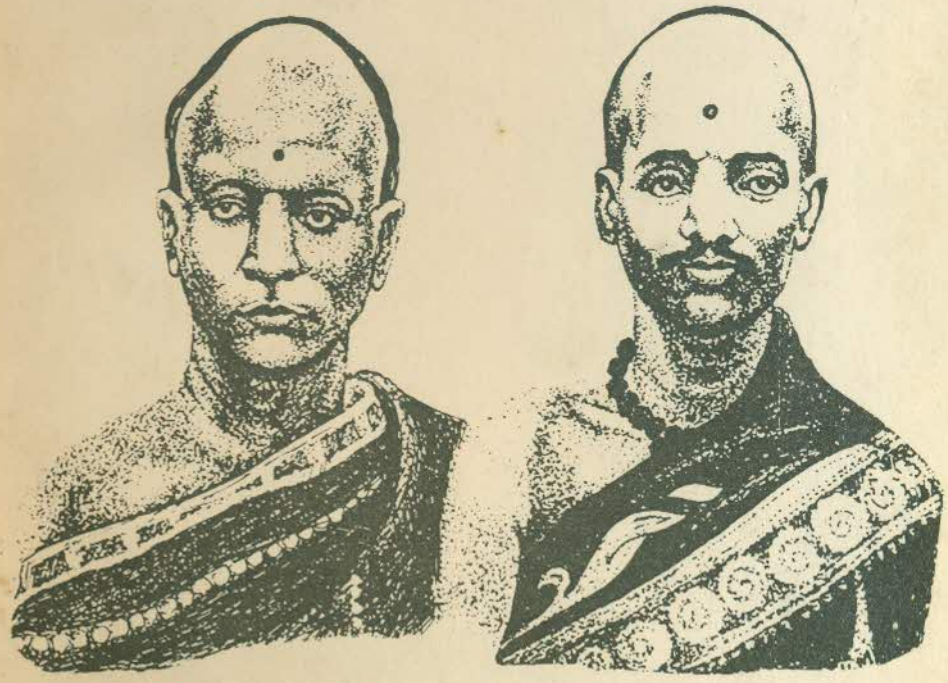

भारतीय साहित्य के निर्माता

तिरुपति वेंकट कवुलु

अस्तर पर मूर्तिकला के प्रतिरूप में राजा शुद्धोदन के दरबार का वह दृश्य छपा है, जिसमें तीन भविष्यवक्ता भगवान बुद्ध की माँ– रानी माया के स्वप्न की व्याख्या कर रहे हैं। उनके नीचे बैठा है मुंशी जो व्याख्या का दस्तावेज लिख रहा है। भारत में लेखन–कला का संभवतः सबसे प्राचीन और चित्रलिखित अभिलेख है।

नागार्जुनकोण्डा, दूसरी सदी ई०
सौजन्य : राष्ट्रीय संग्रहालय, नयी दिल्ली

भारतीय साहित्य के निर्माता

तिरुपति वेंकट कवुलु

लेखक
साल्व कृष्णमूर्ति
अनुवादक
वे. आंजनेय शर्मा

साहित्य अकादेमी

Tirupati Venkata Kavulu (तिरुपति वेंकट कवुलु):
Hindi translation by V. Anjaneya Sharma of
S. Krishnamurth's Monograph in English
Sahitya Akademi, New Delhi (1992), Rs. 15

© साहित्य अकादेमी

प्रथम संस्करण : 1992

प्रकाशक
साहित्य अकादेमी

प्रधान कार्यालय
रवींद्र भवन, 35, फ़ीरोज़शाह मार्ग, नयी दिल्ली 110 001

विक्रय विभाग
'स्वाती', मन्दिर मार्ग, नयी दिल्ली 110 001

क्षेत्रीय कार्यालय
172, मुम्बई मराठी ग्रन्थ संग्रहालय मार्ग, दादर, बम्बई 400 014
जीवनतारा, 23A/44X, डायमंड हार्बर रोड, कलकत्ता 700 053
गुना, 304-305, अन्ना सलाई, तेनामपेठ, मद्रास 600 018
ए.डी.ए. रंगमंदिर, 109 जे.सी. रोड, बैंगलोर 560 002

ISBN 81–7201–314–0

मुद्रक
फाईन प्रिंटस्
21, यशश्री पूर्ती
30/1/1 एरंडवणे
पुणे 411 004

मूल्य 15 रुपये

विषय-सूची

1. तिरुपति वेंकट कवुलु 1
2. दिवाकर्ल तिरुपति शास्त्री 4
3. चेल्लपिल्ल वेंकट शास्त्री 7
4. अवधानम 12
5. महाराजा, राजा और जमीन्दार 20
6. कृतियाँ 23
7. कविता से अनुप्राणित मानवता 29
8. समापन 36
9. परिशिष्ट 38
10. ग्रंथ-सूची 40

1.
तिरूपति वेंकट कवुलु

उन्नीसवीं सदी का अंतिम चरण था। भारत में अंग्रेजों का शासन था। सारा भारत पुनरूत्थान के स्वप्न देख रहा था। सारा देश संघर्ष में था। सामाजिक, साहित्यक तथा राजनैतिक विकास के कार्य में देश के नेता लगे हुए थे। देश भर में अंग्रेंजी शिक्षा प्रबल थी। फलस्वरूप लोगों में साहित्यक तथा सामाजिक मामलों में उदार दृष्टि आ गयी थी । नेता सभी मामलों में उदारता के साथ विचार करने तथा उन विचारों को अमल में लाने की इच्छा रखते थे । नयी हवा के कारण जनता में राजनैतिक चेतनता भी उत्पन्न हुई थी। इन सभी बातों के फलस्वरूप गाँधी जी के नेतृत्व में राष्ट्रीय आंदोलन भी छिड गया था ।

उस समय आंध्र प्रदेश मद्रास प्रेसिडेन्सी के शासन के अंतर्गत था। आंध्र की स्थिति अन्य राज्यों की तरह निराशाजनक थी । अग्रेंजी शिक्षा के प्रचार के बावजूद भी सामाजिक तथा सांस्कृतिक मूल्य पतनोन्मुखी थे । संस्थान और जमीन्दारी के नाम से छोटी छोटी अनेक रियासतों के अधिकारी साहित्य के प्रेमी जरूर थे । संस्थानों में संस्कृत का बडा आदर था। देश भाषाओं के प्रति उपेक्षा की भावना थी । जो तेलुगु साहित्य कृष्ण देवराय के समय में सर्वोच्च शिखर पर था, वह शिथिल सा दीखने लगा था। 17,18 सदी में नायक राजाओं ने तेलुगु साहित्य का झंडा जरूर फहराया था, पर उनका क्षोत्र आंध्र से बाहर बहुत दूर था । लोगों के सामने कोई लक्ष्य न था । नवीनता न थी। विचार रूढ से बने थे। सारे देश की यही स्थिति थी ।

इस स्थिति में भी नयी हवा बहने लगी थी। वह हवा पुररूत्थान की थी। तब तक दो विभूतियाँ तेलुगु देश में उभरी थीं। इनके प्रयत्न से दो धाराएँ विकसित हुई थीं। एक विभूति के रूप में महान समाज सुधारक, बहुग्रंथ लेखक कंदुकूरि वीरेश लिंगम पंतुलु उभरे थे। दूसरी विभूति के रूप में गिडुगु राममूर्ति पंतुलु जी थे। राम मूर्ति पंतुलु जी ने जनता की बोलचाल की भाषा में साहित्य निर्माण का आंदोलन चलाया था। इन दोनों विभूतियों ने भाषा तथा साहित्य के क्षेत्र में बहुत बडा संघर्ष किया, और उसमें पूर्ण रूप से सफल रहे।

उन्हीं दिनों में तिरूपति वेंकट कवुलु भी साहित्य के क्षेत्र में आये। उन दोनों कवियों ने नाटक तथा कविता के क्षेत्र में अदभुत कार्य किया। यह कहना सर्वथा उचित होगा

कि उन दोनों ने साहित्य के क्षेत्र में सारे आंध्र में अपना शासन चलाया था। राज्य किया था। वे कविता साम्राज्य के अधिपति रहे। दिवाकर्ल तिरूपति शास्त्री (1872-1920) और चेल्लपिल्ल वेंकट शास्त्री (1870-1950) दोनों मिलकर कविता करते थे। वे द्वंद्व कवि या कविद्वय कहलाते थे। दोनों मिलकर तिरूपति वेंकट कवि बन गये थे। वे शरीर से दो थे, पर अंतरंग से एक ही थे। वे संस्कृत तथा तेलुगु के प्रकांडपंडित थे।

वे दोनों व्यवहार कुशलभी थे। स्वभाव से अच्छे थे। महा कवि थे। उन के हाथों में तेलुगु कविता ने अपनी रूढ परंपराओं से, परंपरागत शैली से भी अपने को मुक्त किया। उनके हाथों में नाटक ने नया ही रूप धारण किया। वे अपने को सुधारवादी नहीं मानते थे, पर उनके हाथों में नाटक तथा कविता के क्षेत्र में जो सुधार हुआ, जो नयी शैली बनी उससे सारी जनता अभिभूत सी हुई थी। वे सच्चे माने में कवि थे। कविता को जनता जनार्दन तक पहुँचाना उनका एकमात्र लक्ष्य था। उनकी कविता सब की समझ में आती थी। हजारों लोगों की जबान पर चढ गयी थी। उन के पद्य गाँव गाँव में पहुँच गये थे। वे 'अवधानम कला'में निष्णात थे। इस से भी बढकर यह बडी बात हुई कि छंदोबद्ध कविता भी लोग समझने लग गये थे। 1890 से 1920 तक इन कवियोंने सारे आंध्र में भ्रमण किया, अवधानम किये और हजारों कवियों को पैदा किया। जहाँ जहाँ वे गये, साहित्य की- कविता की -धारा बहने लगी थी। सारी आंध्रभूमि साहित्य की सुगंध से महकने लगी थी। कितने ही कवियों ने इन दोनों महा कवियों का अनुकरण किया था। कविता लिखी थी। उनके नाटक इतने प्रसिद्ध हुए कि गाँव गाँव तक पहुँच गयें। प्रत्येक तेलुगु भाषाभाषी की जबान पर चढ गये। सारांश यह कि उन दोनों ने तेलुगु कविता को नयी दिशा दी, नयी प्रेरणा दी। उनकी कृतियाँ सौ से अधिक हैं। संस्कृत की कई कृतिंयों का उन्होंने तेलुगु में अनुवाद किया। मौलिक काव्य लिखे, नाटक लिखे, व्यंग्य रचनायें की, जिन्हे अधिक्षेप काव्य कहा जाता है। आत्मकथा लिखी, यात्रा वृत्तांत लिखे, आलोचना ग्रंथ लिखे। ऐसी कोई विधा नहीं जिसमें उनकी कलम न चली हो। हिन्दू, बौद्ध तथा जैन पुराणों का अनुवाद कार्य भी उन्होंने किया।वे विश्वास करते थे, कई बार प्रकट भी कर चुके थे कि कविता के लिये ही उनका जन्म हुआ है। उन दिनों में बडे बडे कवि अपने को इन महा कवियों का शिष्य कहलाना गौरव की बात समझते थे। तिरूपति वेंकट कविद्वय रस को प्रधानता देते थे। बीसवीं सदी की कविता के वे जनक है। उनके अष्टावधानम के प्रमुख अंग "आकाशपुराण" से आत्माश्रयी कविता ने जन्म लिया था। वे उस कविता के प्रवर्तक हैं। उनकीं जातकचर्या' कृति ने तेलुगु कविता में एक नया अध्याय जोड दिया है।

परवर्ती तथा, आधुनिक कवियों पर इस कविता का बहुत असर पडा है। अनेक आत्माश्रयी कवि तेलुगु साहित्य में बाद पैदा हुए हैं। गरीबी में उनका जन्म हुआ।

जीवन से जूझकर संघर्ष कर उन्होनें उच्च से उच्च साहित्यक पुरस्कार प्राप्त किये। राजा-महाराजाओं से राजकवि भी घोषित हुए थे। इन दोनों कवियों की सफलतायें उनकी साहित्यक कृतियाँ आंध्र की जनता के लिये गौरव के चिन्ह बन गयी हैं।

2.
दिवाकर्ल तिरुपति शास्त्री

भगवान की इच्छा है या संयोग कहिये, दो जिलों के दिवाकर्ल तिरुपति शास्त्री और चेल्लपिल्ल वेंकट शास्त्री दोनों मिलकर तिरुपति वेंकट कवुलु बने है जो बालाजी भगवान का नाम है। वह नाम आंध्र में ही नहीं, सारे भारत में मशहूर है।

विद्यार्थी ज्ञान की गवेषणा में, गुरू की खोज करते है, और इधर उधर घूम फिरकर विद्यार्थी 12 बजे अपराह्न के समय झोली लेकर अन्न की भी भीख मांगते है। गृहिणियाँ थोडा थोडासा अन्न और व्यंजन झोली मे डालती है। तो उससे विद्यार्थियोका पेट भरता है। इसे मधुकरी वृत्ति कहते है। मधुकरी वृत्ति से पेट पालते थे। पतंजलि, महा भाष्यम आदि का अध्ययन करना उन कवियों के जीवन का आरंभिक कार्य था।

तिरुपति शास्त्री जी का जन्म पश्चिम गोदावरी जिले के एंडगंडि गाँव मे 1872 मार्च 26 को हुआ था। एंडगंडि भीमवरम तालूके में है। उनके माता पिता का नाम वेंकटावधानी और शेषम्मा है। पिताजी वैदिक विद्वान थे। सूर्य देवता के उपासक थे। माता अन्नदान के लिये मशहूर थीं। वे "वेलनाडु"शाखा के ब्राह्मण थे। वेलनाडु, ब्राह्मणों की एक उपशाखा है। तिरुपति शास्त्री उनके मातापिता की चौथी संतान है। जब वे बालक थे उनकी माता ने उन्हें आग से बचाया था। शास्त्री जी की प्रारंभिक शिक्षा बूर्ल सुब्बारायुडु की "वीथिवडि" गली की पाठशाला में हुई थी। सुब्बारायुडु जी संस्कृत के बडे विद्वान थे। वे वेंकटावधानी के भी गुरु थे। उसके बाद तिरुपति शास्त्री ने रघुवंशम तथा कुमार संभवम काव्यों का अध्ययन अपने पिता के आश्रय मे किया था। एक दिन तिरुपति शास्त्री जी पानी की एक दुर्घटना में फंस गये थे। उनके माता-पिता ने शास्त्री जी को पूरब गोदावरी जिले के गंगलकुर्रू गाँव में उनकी दूसरी मामी के पास भेज दिया था। मामी की अच्छी संपत्ति थी, फिर भी मामी ने मधुकरी वृत्ति का अवलंबन करने शास्त्री जी को प्रोत्साहित किया। मधुकरी वृत्ति से पेट पालते हुए गरिमेल्ल लिंगय्य शास्त्री के पास तिरुपति शास्त्री ने दो साल तक अध्ययन किया। तब तक भारवी कृत किरातार्जुनीयम तथा कुछ भाणों लघुनाटक का अध्ययन पूरा हुआ था। घर वापस आने के पहले पिप्पर में तिरुपति शास्त्री जी ने पम्मि पेरिशास्त्री के पास मुरारीद्वारा रचित अनर्घराघवम नाटक पूरा किया था। साथ साथ एक और विद्वान के पास न्याय बोधिनी (तर्क) का भी अध्ययन किया था। अनर्घराघवम के चार अंक पूरा होते होते शास्त्री

जी को मालूम हुआ कि षटदर्शन तथा व्याकरण के महा विद्वान चर्लब्रह्मय्य शास्त्री बनारस से अपने घर वापस आये हुए है और उन्होंने संस्कृत व्याकरण की पाठशाला भी आरंभ की है। व्याकरण पढने की इच्छा से शास्त्री "कडियेड्डा गॉव जाने तैयार हुए। ब्रह्मय्या शास्त्री जी माडभूषि वेंकटाचार्य जी का अवधानम देखने अपने शिष्यों के साथ पेंटपाडु गॉव आये थे। रास्ते में तिरुपति शास्त्री उनसे मिले थे।

तिरुपती शास्त्री ब्रह्मय्य शास्त्री के शिष्य बने। तब तक पाँच महीने पूरे हुए थे। लघुकौमुदी का अध्ययन कर रहे थे–तो चेलपिल्ल वेंकटशास्त्री जी भी वहाँ पहुँच गये। तिरुपति शास्त्री तर्क में पटु थे, वे कुशाग्र बुध्दि एवं मेधावी छात्र थे। अपने प्रत्यर्थियों को मिनिटों में तर्क में पराजित करते थे। अध्ययन के समय अपने गुरू से भी ऐसे प्रश्न पूछते थे-तो गुरू को जवाब देने में बहुत परेशानी होती थी। वेंकटशास्त्री कुछ भिन्न प्रकृति के थे। वे बडे चतुर थे, विद्वान भी थे। तिरुपतिशास्त्री से वे संतुष्ट न थे। स्वाभाविक है-दोनौं में प्रतिद्वंदिता भी आयी। सभी विद्यार्थी दो वर्गो में विभाजित हो गये थे। एक बार गुरू ने विद्यार्थियों को सलाह दी कि वे गणपति का उत्सव मनावें जिससे कि विद्यार्थियों का भला हो। उत्सव मनाने पैसे की जरूरत थी। तिरुपतिशास्त्री व्यावहारिकता में उतने पटु न थे। वेंकटशास्त्री तेलुगु में कविता लिखते थे और पौराणिक कथाओं का अच्छा वाचन करते थे। तो वेंकट शास्त्री तिरुपति शास्त्री दोनों मित्र बने। दोनों ने मिलकर गणपति नवरात्रि उत्सव को सुंदर ढंग से मनाया, काफी पैसा वसूल किया था। धीरे धीरे दोनों एक दूसरे को अच्छी तरह समझ गये, नजदीक आयें, पर दोनों तबतक अलग अलग ही कविता लिखते थे। 1890 के करीब ब्रह्मय्या शास्त्री ने अपनी पाठशाला "धवलेश्वरम" को बदल दी थी। विद्यार्थी भी गुरू के साथ धवलेश्वरम पहुँच गये। एक बार वेंकटशास्त्री एंडगंडि जा कर दिवाकर्ल तिरुपति शास्त्री के परिवार से भी मिलकर आये। उसके बाद वेंकट शास्त्री काशी गये, ब्रह्मय्य शास्त्री के अनुरोध पर फिर घर वापस आये। वेंकट शास्त्री तिरुपति शास्त्री फिर से साथी बने। तिरुपति शास्त्री जी की मृत्यु तक वे दोनों साथ ही रहे। दोनों मिलकर कविता लिखते थे। इतना ही नहीं द्वंद्वकवि भी बने। तब से उनका नाम तिरुपति वेंकट कवुलु हो गया।

काशी से वापस आने के बाद काशीयात्रा के लिये जो पैसा उधार में लिया गया था, उसे चुकाने के लिए वेंकट शास्त्री ने शतावधानम करना आरंभ किया। गुरू ने तिरुपति शास्त्री को भी साथ ले जाने की वेंकट शास्त्री को सलाह दी।

दोनों काकिनाडा पहुंचे। रास्ते में वेंकट शास्त्री ने शतावधानम के रहस्य तिरुपति शास्त्री को समझा दिये थे। दोनों ने मिलकर काकिनाडा में अवधानम बहुत सुंदर ढंग से किया। उस क्षण से वे दोनों और नजदीक आये। जीवनभर दोनों उसे निभाते रहे। तिरुपति शास्त्री वेंकट शास्त्री को उस क्षण से अपना गुरू भी मानने लगे थे। शतावधानम का कार्यक्रम और अध्ययन कार्य दोनों उनके साथ साथ चलते रहे। 1874 में तिरुपति शास्त्री की शादी हुई। तब तक दोनों कई शतावधानम कर चुके थे। धातुरत्नाकरम कृति

भी पूरी कर दी। मद्रास में अनिबिसेंट की प्रशंसा पायी। बाद वेंकट गिरि संस्थानम गये। नेल्लूर के स्थानीय देवता मूलस्थानेश्वर पर संस्कृत में स्तुति लिखी। उसके बाद उनकी गद्दाल, आत्मकूर, विजयनगरम तथा पिठापुरम की यात्राएँ भी सफल रहीं। इससे उन्हें बडा यश मिला। तिरुपति शास्त्री के विवाहोत्सव ने उन्हे श्रृंगार रस में "श्रवणानंदम"लिखने की कथावस्तु एवं प्रेरणा प्रदान की। उस कृति से उन्हें बडी प्रतिष्ठा मिली। उक्त कृति को 1898 में पिठापुरम के वाड्रेवु वेंकट रत्नम को समर्पित किया गया था। यह जानकर पोलवरम के जमीन्दार ने उन्हें निमंत्रित कर एडिवन अर्नाल्ड के लाईट आफ एशिया का तेलुगु में अनुवाद करने का अनुरोध किया तो कवियों ने किसी एक गद्य कृति के आधार पर 'बुद्धचरितम' काव्य लिखा। संस्कृत के अश्वघोष तथा क्षेमेन्द्र के बुद्धचरितम तथा बुद्ध जन्म कथा से भी सहायता ली गयी। जमीन्दार ने उन दोनों से अपने दरबारी कवि बने रहने की प्रार्थना की। वेंकट शास्त्री उस के लिये तैयार न हुए, पर किसी तरहसे तिरुपति शास्त्री को राजी किया गया। 1901 से तिरुपति शास्त्री काकिनाडा में रहने लगे।

पोलवरम जमीन्दार ने 1889 में सरस्वती नामक पत्रिका आरंभ की थी। सरस्वती पत्रिका का काम तिरुपती शास्त्री के हाथ में आगया। पत्रिका के पन्नों को भरने की जिम्मेदारी भी उनकी हो गयी, तो उन्होंने बाल रामायण, मुद्राराक्षस तथा मृच्छकटिका का संस्कृत से तेलुगु में अनुवाद किया। बिल्हण का विक्रमदेव चरितम, वीरनंदि का चंद्रप्रभा चरितम तथा बाण का हर्षचरितम आदि का तेलुगु में अनुवाद किया। पांडवविजयमु, एडवर्ड पट्टाभिषेकम आदि मौलिक नाटक भी लिखे थे। सुवर्ण पत्रिका भी लिखी थी।

सुवर्णपत्रिका और हर्षचरितम दोनों अपूर्ण रह गये। 'व्यसनविजयम'भी अपूर्ण रहा। इन्हीं दिनों में तिरूपति शास्त्री ने गजाननविजयम नाटक भी लिखा। इसके अलावा आर्यमत बोधिनी के लिये अप्पय्य दीक्षित के वैराग्यशतकम का भी अनुवाद किया।

1918 में पोलवरम जमीन्दार का स्वर्गवास हुआ। उस से तिरुपति शास्त्री को बहुत दुःख हुआ। गोलक वीरवरम की जमीन्दारिणी राव रामायम्मा ने शास्त्री को आर्थिक सहायता पहुँचायी। रामायम्मा के भाई चेलिकानि लच्चाराव आंध्रभाषा विलासिनि पत्रिका चलाते थे। उसका काम शास्त्री जी को सौंपा गया। तिरुपति शास्त्री ने "प्रभावती प्रदयुम्नम" का अनुवाद शुरू किया, पर वह अपूर्ण रहा। तिरुपति शास्त्री ने रवीन्द्र नाथ ठाकुर की कुछ कहानियों का भी तेलुगु में अनुवाद किया। वह पुस्तक दोनों कवियों के नाम से न छपी। केवल तिरुपति शास्त्री के ही नाम से छपी। उसके बाद वे मधुमेह के शिकार हुऐ और 1920 में तिरुपति शास्त्री का देहांत हुआ।

3.
चेल्लपिल्ल वेंकट शास्त्री

श्री चेल्लपिल्ल वेंकट शास्त्री राजमहेन्द्रवरम के समीप में स्थित कडियम नामक गाँव में 1870 अगस्त 8/9 को पैदा हुए थे। कडियम पूर्व गोदावरी जिले में है। उनके माता-पिता कामय्या और चंद्रम्मा हैं। शास्त्री ब्राह्मणों की उपशाखा आरामद्राविड के हैं। उनका परिवार विद्वत्ता के लिये प्रसिद्ध था। वेंकट शास्त्री के परदादा के भाई ने वेंकटेश्वर विलासम तथा यामिनीपूर्णतिलकविलासम नाम से तेलुगु में दो कृतियों की रचना की थी। उन के घर में इस महाकवि द्वारा संगृहीत ताडपत्र ग्रंथों का एक पुस्तकालय था।

सात साल की उम्र में वेंकट शास्त्री की पढाई आरंभ हुई। नौ साल की उम्र में उनका उपनयन संस्कार संपन्न हुआ। शरीर से शास्त्री बहुत कमजोर थे। उन्हें आँख की बीमारी भी थी। बारह साल की उम्र में गरीबी के कारण शास्त्री जी के पिता अपना गाँव छोड़कर यानाम गये थे। यानाम फ्रेंच टाउन है जो समुद्र के किनारे बसा है। कुछ दिन तक यानाम में उन्होने तेलुगु और अंग्रेजी पढी। पर उनकी रूचि संस्कृत की तरफ़ थी। कानुकुर्ति भुजंगराव के यहाँ उन्होने संस्कृत का अध्ययन शुरू किया। वे वेद भी सीखना चाहते थे। सोलहवें साल में थोडा-बहुत संगीत भी सीखा था। मृदंगम बजाना भी सीखा। निंदापूर्ण पद्य लिखने में भी ये बहुत पटु थे। उसका परिणाम अच्छा न निकला, तो इनका परिवार फिर कडियम वापस पहुँचा।

वेंकट शास्त्री का विद्याप्रेम बहुत बढ गया। अल्लम राजु सुब्रह्मण्यम कविराजु एक दिन उनके गाँव में आये। उनसे शिक्षा प्राप्त करने की अभिलाषा से वेंकट शास्त्री ने अपना गाँव छोड दिया। भोजन की समस्या थी। "वारम" करके भोजन करना चाहा। सप्ताह में एक एक दिन एक एक गृहस्थ गरीब विद्यार्थी को अपने घर में भोजन देते थे। इस प्रकार बच्चों को सातों दिन भोजन मिल जाता था। उसे "वार भोजनम" कहते हैं।

कविराजु ने वेंकट शास्त्री को बताया कि इस गाँव में वार भोजन मिलना कठिन है। फिर शास्त्री ने गणपति अध्यापक की सहायता माँगी तो उन्होने बताया कि पहले भोजन का प्रबंध कर लो। वेंकट शास्त्री को भोजन मिलना कठिन हो गया। फिर वे काटवरम गये। वहाँ श्रीपाद कृष्णमूर्ति शास्त्री जी जैसे अध्यापक मिले और भोजन का

भी प्रबंध हो गया। श्रीपाद कृष्णमूर्ति शास्त्री महान विद्वान थे। वेंकट शास्त्री के बाद श्री कृष्णमूर्ति शास्त्री आंध्र प्रदेश सरकार के राज कवि बने थे। वेंकट शास्त्री ने कृष्णमूर्ति शास्त्री के पास तीन महीने मात्र अध्ययन किया। कुमारसंभवम के दो सर्ग पूरे किये। मेघसंदेशम का कुछ भाग पूरा किया। तब तक कृष्णमूर्ति शास्त्री की पत्नी का देहांत हुआ। वेंकट शास्त्री भी बुखार के शिकार हुए, इस कारण से वे यानाम चले गये। काटवरम में कीर्तन लिखना, शतरंज खेलना वेंकट शास्त्री ने सीख लिया था। यानाम में गुरु ने कविता न लिखने का आदेश दिया। वे समझते थे कविता लिखते बैठने से वेंकट शास्त्री की पढाई में बाधा पडेगी। पर वेंकट शास्त्री ने कुछ न सुना। कविता लिखते रहे। इसके अलावा शतरंज में स्थानीय खिलाड़ियों को हराया, फिरभी मेघ-संदेशम पूरा किया। कविता तथा शतरंज के प्रति उनका अनुराग इतना ज्यादा था कि उनके मन में ऐसा आत्मविश्वास जम गया कि उन दोनों कलाओं में कोई भी व्यक्ति उन्हें जीत नहीं सकता है और कविता के लिये ही उनका जन्म हुआ है। फिर वे अपने गाँव वापस चले गये।

उनकी आँख बहुत तकलीफ देती थी। कविता लिखना उन्होंने छोडा नहीं था। अठारह साल की उमर में यानाम के देवता वेंकटेश्वर पर उन्होंने एक शतक लिखा। स्थानीय विद्वान ने वेंकट शास्त्री की कविता में "संधि" संबंधी एक गलती दिखायी। वह संस्कृत की संधि थी। शास्त्री जी संस्कृत अच्छी तरह से जानते न थे। उन्होंने निश्चय किया कि बनारस जाकर पाणिनीयम (संस्कृत व्याकरण) अध्ययन करके लौटेंगे। एक मित्र ने बनारस जाने के लिए उन्हें पैसा देने का वचन दिया था, पर शास्त्री ने पैसा न लिया।

आँख की स्थिति बहुत खराब होती जा रही थी। दवाइयाँ बहुत चलती थीं। पर आँख ठीक न हुई। फिर भी शास्त्री जी बनारस जाना चाहते थे। एक दूसरे मित्र ने एक विचित्र प्रस्ताव रखा जिसे इन्होंने मान लिया। दोनों के पास पैसा न था। मित्र ने सुझाव दिया - रास्ते में उदारमना लोगों से पैसा वसूल करेंगे। शास्त्री ने मान लिया। घर में काजुलूर जाने की बात बताकर बनारस के लिये रवाना हुए। रास्ते में वह मित्र मिल गया। पैदल चलकर, बैलगाडी पर सवार होकर, धर्मशालाओं में भोजन करते हुए वे दोनों विशाखापट्टणम पहुँचे। उनके मित्र ने अपना मन बदल लिया। वह घर वापस जाना चाहता था। उन्होंने अपनी वापसी के कई कारण बताये। भाषाकी कठिनाई, धर्मशालाओं का अभाव आदि आदि।

वेंकट शास्त्री को भी अपना घर वापस आना पडा। पिठापुरम में संस्कृत पढानेवालों की खोज की, पर उन्हें किसीका नाम न मिला। सामर्लकोट में मालूम हुआ कि प्रतिवादि भयंकर राघवाचार्य जी व्याकरण अच्छा पढाते हैं। आचार्य ने मान भी लिया। पर भोजन की समस्या थी। गुरू ने मधुकर की सलाह दी, पर शास्त्री जी उससे अनभिज्ञ थे। एक मित्र ने मदद करने का वचन दिया, पर बीच में ही छोडकर चला गया।

शास्त्री को मधुकरी करनी पडी। तीन महीने तक किरातार्जुनीयम तथा लघुकौमुदी पढता रहा। साथ ही तेलुगु का अध्ययन भी जारी था। पर उनकी आँख की तकलीफ बढती गयी। इस कारण उन्हें विवश होकर घर लौटना पडा, पर अध्ययन उन्होंने छोडा नहीं। हर दिन दो गाँवों में पैदल जाते थे। रात को पिल्लंक जाते, अनंताचार्य के पास लघुकौमुदी पढते। पल्लेपालेम में मधुनापंतुल सूरय्या के पास किरातार्जुनीयम पढते थे। तीन महीनों के बाद माघ काव्य शुरू किया। आँख की बीमारी बढती ही गयी। फिर भी वे अध्ययन जारी रखना चाहते थे। एक दिन अचानक उनके घर की लाइब्रेरी में सिद्धांत कौमुदी की प्रति मिली। तबतक मालूम हो गया था - चर्लब्रह्मय्या शास्त्री बनारस से वापस आ गये हैं। वे विद्यार्थियों को पढाते हैं और भोजन भी देते हैं।

करीब करीब एक आँख के अंधे वेंकट शास्त्री कवि शुक्राचार्य की तरह एक दिन कोटिपल्लि धर्मशाला में पहुँचे। धर्मशाला में एक ब्राह्मण ने उनकी आँख देखकर सलाह दी कि पालकोल्लु के पास "चिंतलपर्रु" जाकर आँख के वैद्य जुलाहे से इलाज करावें। फिर भी वेंकटशास्त्री उनकी सलाह का तिरस्कार करके सीधे ब्रह्मय्य शास्त्री के पास गये, उनके शिष्य बने। वहीं तिरुपति शास्त्री से वेंकट शास्त्री की भेंट हुई थी। गुरू की आज्ञा लेकर वे आँख का इलाज कराने चिंतलपर्रु गये।

चिंतलपर्रु में दो महीनों तक इनकी आँख का इलाज चलता रहा। इन दो महीनों में अध्यात्मरामायण का प्रवचन करके शास्त्री ने गाँव वालों का आदर प्राप्त किया। फिर कडियेड्डु गुरू के पास गये और वहाँ पर वे तिरुपति शास्त्री के निकट संपर्क में आये।

गरीब वेंकट शास्त्री को पुस्तकें खरीदने के लिये पैसा कमाना पड़ा। राजमहेंद्रवरम के वकीलों तथा अमीर व्यापारियों को अपनी चित्रकविता तथा बंध कविता से इन्होंने प्रभावित किया और उनसे जो पैसा मिला उससे पुस्तकें खरीदीं।

प्रारंभ में इन दोनों कवियों के बीच जो प्रतिद्वंद्विता एवं शत्रुता थी इस अवसर ने उन्हें परस्पर एक दूसरे को भलीभांति समझने का अवसर दिया। तथा सदा के लिए उन्हें मैत्री के सूत्र में बांध दिया।

1889 में वेंकटशास्त्री की शादी हुई। वे संस्कृत में भी कविता करने लगे। वे एंडगंण्डि जाकर तिरुपतिशास्त्री के परिवार से भी मिलकर आये।

काशी जाने की उनकी इच्छा बलवती रही। गुरू से कहे बिना वे काशी यात्रा के लिए निकलना चाहते थे, निकले। पैसे की जरूरत थी। रास्तें में निडमर्रु में अपने को कवि तथा अवधानकर्ता घोषित किया। उस समय उनकी उमर बीस साल की थी। गाँव वालों ने अवधानम का प्रबंध किया। शास्त्री ने सफलतापूर्वक अवधानम किया तो गाँव के लोग बहुत खुश हुए। तीस रूपये दिये। 1890 में यह उनका पहला अवधानम था। गुंडुगोल्लु में दूसरा अवधानम किया। कुछ पैसा मिला। वहाँ से वे विजयवाडा पहुँचे। उसके बाद सिकंदराबाद गये। वहाँपर कुछ पैसा कमाया। बाद प्रयाग पहुँचे। वहाँ से काशी गये। काशी में चार महीने रहे।

काशी में नोरि सुब्रह्मण्यशास्त्री से व्याकरण तथा चामर्ति शोभनाद्रिशास्त्री से तर्क पढा। ब्रह्मय्य शास्त्री के आदेश तथा अपने माता-पिता के आग्रह से उन्हें अपने गाँव वापस आना पडा। काशी में शास्त्री ने संस्कृत में कई अष्टक लिखे थे। कलकत्ता होते हुए वे काशी से घर वापस आये। काशी से वापस आने के बाद गंगा संतर्पणम करना जरूरी था। वेंकट शास्त्री के पास पैसा न था। कोनसीमा के तीन गाँवो में मुम्मडिवरम, इनापुरम तथा केशनकुर्ति में अवधानम करके पैसा कमा लिया। संतर्पणम का कार्य पूरा किया। फिर वे ब्रह्मय्य शास्त्री के शिष्य बने।

उस समय तिरुपति शास्त्री और वेंकट शास्त्री दोनों द्वंद्वकवि बने। दोनों मिलकर कविता करने लगे थे। उनकी प्रारंभिक रचनायें संस्कृत में थी। रामायण कथा के आधार पर धातुरत्नाकर चंपूकाव्य लिखा। तब तक ब्रह्मय्य शास्त्री की पाठशाला धवलेश्वरम को बदल गयी थी। सब विद्यार्थी गुरू के साथ धवलेश्वरम पहुँचे थे। वहाँ इन दोनों तिरुपति वेंकट कवियों ने शृंगार शृंगाटक नाटक लिखा। उसे वीधिनाटक कहते है। उन्होंने वेद का ज्ञान भी प्राप्त किया।

काशी से वापस लौटने में जो पैसा खर्च हुआ वह उधार में था। वेंकटशास्त्री को कर्जा चुकाना था। उस के लिये काकिनाडा में अवधानम का प्रबंध किया गया। तिरुपति शास्त्री भी साथ थे। वेंकट शास्त्री ने अवधानम के रहस्यों से तिरुपति शास्त्री को भी परिचित कराया। दोनों ने मिलकर काकिनाडा में सफलतापूर्वक अवधानम किया।

उसके बाद उनका अवधानम कार्यक्रम लगातार चलता रहा। जमीन्दारों तथा संस्थानों, रियासतों के शहरों की यात्रा के साथ साथ उनका रचना कार्य भी चलता रहा। काकिनाडा में अवधानम कार्यक्रम के बाद उन्होंने वेंकटाधूरि लिखित लक्ष्मीसहस्रम के नमूने पर कालिका सहस्रम लिखना शुरू किया। अमलापुरम में शतावधान कार्यक्रम चला। वहाँ अष्टावधानम भी हुआ। इस बीच शुक रंभा संवादम नाटक लिखा। एलूर तथा मछलीपट्टणम आदि शहरों में अवधानम करके वे मद्रास पहुँचे। वहाँ पर अनिबिसेंट की प्रशंसा प्राप्त की।

मद्रास से वापसी में वे वेंकटगिरि रियासत में गये। जमीन्दारों के पास जाने का उनका वह पहला अवसर था। नेल्लूर में मूलस्थानेश्वर पर एक शतक लिखा।

वेंकटशास्त्री के परिवार ने इंजरम में घर बनाया था। वेंकटशास्त्री का विद्यार्थी जीवन समाप्त हुआ। तेलुगु कवि के रूप में वे प्रतिष्ठित हो गये। 'रसिकानंदम' तथा 'शुकरंभा संवादम' दो कृतियाँ उनकी प्रकाशित हुईं।

गद्वाल, विजयनगरम, मोगलतुर्रु, आत्मकूर, किलंपूडि, पोलवरम, मंडवरम, कापर्ति तथा तोटलवल्लूर आदि गाँवों में वे गये। इन स्थानों में आदर और सम्मान पाया।

1897 से 1901 तक श्रवणानंदम, एलामाहात्म्यमु, 'श्रीनिवास विलासमु,' 'लक्ष्मी परिणयमु,' देवी भागवतम,' बुद्धचरितम्' तथा जातकचर्य कृतियाँ इनकी प्रकाशित हुईं। तिरूपति शास्त्री पोलवरम जमीन्दार के दरबारी कवि बने। वेंकटशास्त्री तेलुगु पंडित के

रूप में मछलीपट्टणम में रहने लगे। (1904 से 1915 तक)

वेंकटशास्त्री का मछलीपट्टणम में रहना बहुत बडी घटना हो गयी। उससे तेलुगु का बहुत बडा उपकार हुआ। सैकडों विद्यार्थियों ने पाठशाला में तेलुगु ली। उस समय के उनके शिष्य बहुत प्रसिद्ध हुए। विश्वनाथ सत्यनारायण, काटूरि वेंकटेश्वरराव, पिंगलि लक्ष्मी कांतम उनके यशस्वी विद्यार्थी थे। उस समय इनकी कई पुस्तकें प्रकाशित हुईं थी। वेंकटशास्त्री 1916 में इस्तीफा देकर मछलीपट्टणम से अपने गाँव चले गये थे। मछलीपट्टणाम में उन्हें गंडपेडेरम (विख्यात कवियों की कविता एवं पांडित्यपर प्रसन्न हो कर उनके वाम पाद (बायें पैर) में स्वर्ण कंकण पहनाने की आन्ध्र में परिपाटी है।) सोने का कंकण दिया गया।

1920 में तिरुपतिशास्त्री का देहांत हुआ। इस के उपरांत वेंकटशास्त्री का अपने गुरू कृष्ण मूर्ति शास्त्री से झगडा हुआ। उस के फलस्वरूप जयंती बाहर आयी। तिरुपतिशास्त्री के निधन के बाद वेंकट शास्त्री ने एक दो बार अवधानक किया उसरे बाद छोड दिया।

1933 में मछलीपट्टणम में वेंकटशास्त्री की षष्टिपूत्रि का उत्सव मनाया गया। 1949 में विजयवाडा में आस्थान कवि का उत्सव संपन्न हुआ। 1950 में वेंकट शास्त्री का स्वर्गवास हुआ।

थोडे से पृष्टों में उनके जीवन को चित्रित करना बहुत कठिन काम है। यह छोटा सा प्रयत्न है। उनके कृतित्व ने तेलुगु साहित्य को बहुत आगे बढाया है।

4.
अवधानम

1895 में विजयनगर के महाराजा श्री आनंदगजपति राजु से मिलकर तिरुपति वेंकट कविद्वय ने निम्नलिखित कविता सुनायी।

स्थैर्यमु लेनि चित्त मवधान मेरूंगनि सत्कवित्व
मौदार्यमुलेनि हस्तमु यथार्थत लेनि रसज्ञत मंचि
माधुर्यमु लेनि गानमु मृदुत्वमु लेनि वचोप्रसंग
मैश्वर्यमु लेनि भोगमुलु अनश्वर मय्यवि दंतिभूवरा।

'चित्त जिस में स्थिरता नहीं, कविता जो अवधानम न जानती है, हस्त जिस में उदारता नहीं, मान्यता जिस में सत्य नहीं, संगीत जिसमें माधुर्य नहीं, बातचीत जिसमें मृदुता नहीं, भोग जिस के पास ऐश्वर्य नहीं, हे राजन! वे सब निस्सार हैं।"

कविता व्यक्तिगत होती है, पर सब के लिये आस्वाद करने योग्य होती है। कवि पाठक को भी दृष्टि में रखकर गहराइयों में जाकर कविता करता है। अवधानम इन दोनों तत्वों को दृष्टि में रखता है।

अवधानम का मतलब चित्त की एकाग्रता है। अलंकार शास्त्र में इसे समाधि बताया गया है। कल्पना और रचना दोनों को यह व्यक्त करता है। पहले वेद पंडितों के बीच में अवधानम प्रचलित था। जो वेद में निपुण हैं उन्ही को अवधानी कहा जाता था। उस के बाद साहित्य में उसका प्रवेश हुआ। खासकर कविता में। अलंकार शास्त्र में चार तरह की कविताओं का वर्णन हुआ है। 1. आशु कविता 2. चित्र कविता जिसे बंध कविता भी कहा जाता है। 3. विस्तार कविता और 4. मधुर कविता। अवधानम आशुकविता के अंतर्गत आता है। संस्कृत में तथा अन्य भारतीय भाषाओं में आशु कविता प्रचलित है। पर अवधानम तेलुगु साहित्य में ज्यादा प्रचलित दीखता है। 13 वीं सदी से तेलुगु प्रांत में अवधानम प्रचलित था। 14 वी सदी के वेमुलवाड भीमकवि तथा 15 वीं सदी के श्रीनाथ कवि आशुकविता के लिए प्रसिद्ध थे। 16 वीं सदी के रामराज भूषण शत लेखिनी अवधानम में निपुण थे। आशुप्रबंध रचना, शतघंटकवनमु और व्यस्ताक्षरी का अवधानम में महत्वपूर्ण स्थान था। उसी सदी के कविगोंड धर्मन्ना

तथा हरिभट्ट दोनों शतलेखिनी अवधानम में प्रसिद्ध थे। अष्टघंटावधानम में भी वे प्रसिद्ध थे। उसी सदी के मरिंगंटि सिंगराचार्य की उपाधि ही 'शतघंटावधानी' था। 18 वीं सदी के नेल्लूरि वीरराघव कवि नव विध अवधानम में निष्णात थे। 17 वीं सदी के रघुनाथ राय की दरबारी कवयित्री मधुरवाणी शतावधानी थी। आधुनिक युग में माडभूषि वेंकटाचार्य का नाम बडे ही आदर के साथ लिया जाता है। इन का अवधानम देखने चर्लब्रह्मय्य शास्त्रीजी जाया करते थे। ब्रह्मय्या शास्त्री हमारे इन दोनों कवियों के गुरू हैं।

अवधानम तीन तरह का होता है-अष्टावधानम्, शतावधानम और सहस्त्रावधानम। अष्टावधानम इन में बहुत कठिन होता है।

शतावधानम में एक सौ पृच्छक-प्रश्नकर्ता बैठते है। एक प्रश्नकर्ता संस्कृत में या तेलुगु में कविता का एक प्रश्न देता है और स्वयं विषय चुनता है। शतावधानी से कहता है कि फलाने छंद में चुने विषय पर कविता होनी चाहिये। शतावधानी हर एक प्रश्नकर्ता के प्रश्न के जवाब में एक पंक्ति बोल देता है। सौ पृच्छकों को एक सौ पंक्तियाँ सुनाने के बाद दूसरी, तीसरी चौथी पंक्तियाँ सुनाकर अंत में पूरी कविता उसी क्रम में पढ देता है। क्रम में थोडी सी भी गलती हो तो पूरा कार्यक्रम असफल हो जाता है। यह पहली कठिनाई है। दूसरी कठिनाई यह है कि पृच्छक अपने बैठने का स्थान बदल लेते है। 79 वाला 23 में बैठेगा। वैसे ही बहुत से लोग स्थान बदल लेंगे। पर शतावधानी को पहले के क्रम में ही कविता पूरी करनी पडती है। यह बहुत ही कठिन है।

अष्टावधान में सिर्फ आठ ही प्रश्नकर्ता बैंठते हैं। यह और भी कठिन अवधानम है। अवधानी का ध्यान भंग करने आठ तरह के कार्यक्रम इसमें होते है। हर कोई पृच्छक अवधानी का ध्यान भंग करना चाहता है। और उसकी एकाग्रता नष्ट करना चाहता है। एक पृच्छक खास छंद में कविता करने को कहता है। यह प्रश्न कवि की कल्पना शक्ति तथा वर्णन शक्ति की परीक्षा करता है। फिर भी अवधानी के लिये यह थोडा आसान है। दूसरा प्रश्नकर्ता एक समस्या देता हैं, उस का अर्थयुक्त जवाब चाहता है। समस्या अकसर कविता की चौथी पंक्ति में व्यक्त होती है। उसमें विरोधी बातों का मिश्रण होता है। कभी कभी वह अश्लील भी होता हैं। 'दिये गये शब्दों का ही प्रयोग करते हुए विशिष्ट अर्थ में उसे व्यक्त करना पडता है।

दूसरा व्यस्ताक्षरी है। इसका मतलब बदले हुए अक्षर है। एक कहावत या प्रसिद्ध पंक्ति के अक्षरों को इधर उधर करके ऐसे प्रस्तुत किया जाता है कि जिससे कोई अर्थ न निकले। अवधानी को पंक्ति को ठीक अक्षरों में बिठाना पडता है, सही कहावत या सही पंक्ति अवधानम के अंत में प्रस्तुत करना पडता है। इस प्रकार चार स्तरों में यह कार्य संपन्न होता है।

तीसरा लौकिक प्रसंग है। इसी को अप्रस्तुत प्रसंग भी कहते है। इसमें अवधानी

की एकाग्रता को भंग करने का अकसर प्रयत्न किया जाता है। तरह तरह के कई अनावश्यक प्रसंग उठाये जाते हैं। यह कार्य बहुत जागरूक प्रश्नकर्ता को दिया जाता है। जब अवधानी गंभीरता से किसी पंक्ति को बनानें में संलग्न होता है तब प्रश्नकर्ता उनका ध्यान भंग कर देता है। सर्कस में बफून, नाटक में विदूषक जो काम करता है वह काम यह प्रश्नकर्ता करता है। ऐसे प्रसंग प्रश्नकर्ता उठाता है जिससे प्रेक्षकों का मनोरंजन होता हो।

चौथा शतरंज या ताश का खेल होता है। पाँचवाँ काव्यपाठ है। छठा पुराणवाचन है। कहीं से किसी पुराण का प्रसंग दिया जाता है। एक सज्जन बीच बीच में मंच पर फूल फेंकता रहता है। फूलों की सही गिनती अवधानी को देनी पडती हैं। बीच बीच में घंटी बजायी जाती है। उसकी गिनती का विवरण भी अवधानी को देना पडता है।

कभी कभी इसके बदले में ज्योतिष, गणित आदि विषयों पर भी प्रश्न पूछकर अवधानी की विद्वत्ता की परीक्षा ली जाती है। कुछ लोग इसे "दत्तपदि" के रूप में लेते हैं। दत्तपदि में छंद, विषय और चार पाँच शब्द भी दिये जाते हैं। उन शब्दों का प्रयोग करते हुए चारों पंक्तियाँ पूरी करनी पडती है। व्यस्ताक्षरी के बदले कभी कभी न्यस्ताक्षरी से भी काम लिया जाता है। इसमें छंद और विषय दिये जाते हैं और यह भी कहा जाता है कि निश्चित जगह पर निश्चित अक्षर का रहना जरूरी है। आठवाँ निषेधाक्षरी है। प्रश्नकर्ता विषय देता है। अवधानी एक अक्षर बोलते है तो प्रश्नकर्ता संभावित दूसरे अक्षर का निषेध करता है। अवधानी रामायण की कथा के लिये "रा" कहते है तो प्रश्नकर्ता "म" का निषेध करता है। "म" अक्षर का प्रयोग न हो तो राम शब्द बनता नहीं। पृच्छक अवधानी को हराने का कदम कदम पर प्रयत्न करता है। पर इसमें छंद का भंग करने वाले अक्षर का निषेध नहीं हो सकता है।

तिरुपतिशास्त्री और वेंकट शास्त्री दोनों एक दूसरे की अच्छी तरह से पूर्ति करते थे। तिरुपतिशास्त्री शास्त्र के क्षेत्र में तथा वेंकट शास्त्री कविता के क्षेत्र में पारंगत थे। पहले में व्युत्पत्ति थी तो दूसरे में प्रतिभा थी। अवधानम के समय एक पहली पंक्ति बनाते थे तो दूसरे दूसरी पंक्ति बनाते थे। इसके लिये दोनों कवियों में सामंजस्य तथा एक दूसरे को जानने की बडी आवश्यकता है। आशुकविता में एक, एक पद्य सुनाते तो दूसरे दूसरा पद्य सुनाते थे। वे शरीर से दो थे, पर आत्मा से एक ही थे।

1893 से 1920 तक आंध्र के साहित्य के क्षेत्र में उन कवियों का राज्य था। वे दो स्थानों मे रहते थे, पर दोनों ने मिलकर काम किया था। करीब करीब 200 अवधानम उन्होंने किये थे। 100 पुतकें लिखी थीं। वे कितने ही महाराजाओ तथा जमीन्दारों के संस्थानों रियासतों में गये थे।

जैसे पहले ही बताया गया वे दोनों बहुत स्वतंत्र भी थे, व्यावहारिकता में निपुण थे। उन्होंने बडी बडी लंबी यात्रायें की थीं। कई कार्यक्रम उन्होने स्वीकार भी न किये थे।

इनके अवधानम की यह विशेषता थी कि कविता को सही परिप्रेक्ष्य में इन्होने प्रस्तुत किया था। इनके अवधानमों के कारण अच्छी तेलुगु का देशभर में प्रचार हुआ था। वेंकटगिरिके अवधानम में इन्होने स्पष्ट कह दिया कि अवधानम के अवसर पर चित्र कविता या बंध कविता के प्रश्न पूछने न चाहिये। किसान अपनी फसल सुरक्षित रखना चाहेगा वह कभी तूफान न चाहेगा। गद्वाल अवधानम में उन्हानें कहा-कवि बनना, अच्छी कविता लिखना पूर्वजन्म के पुण्य का फल है। वह मात्र अभ्यास से प्राप्त नही होता। रस कविता का जीवन है। अच्छी कविता लिखने की शक्ति पुण्य के प्रभाव से ही प्राप्त होती है।

अवधानम के कारण तेलुगु कविता जनता तक पहुँची। तिरूपति वेंकट कवुलु की शैली ने जनता को मोह लिया था। उससे तेलुगु जनता की रूचि में परिवर्तन हुआ। रस का संचार हुआ। आधुनिक कविता का द्वार भी यहीं से खुल गया।

अवधान की प्रतिभा के संबंध में दो वाक्य लिखना आवश्यक है। शतावधानम पूरा करने में चार दिन लगते हैं। शतावधानी को हर दिन कम से कम छः घंटे प्रश्नकर्ताओं का सामना करना पडता है। करीब करीब पूरे 24 घंटे शतावधानम में लग जाते हैं। प्रश्न कोई भी हो सकता है। चाहे शास्त्र संबंधी हो या साधारण। किसी का प्रश्न है पकोडी पर चंपकमाला वृत्त में कविता करो। किसी का प्रश्न है, हरी मिर्च पर सीस* छंद में कविता लिखो। किरोसिन पर स्रग्धारा में, पिनपर उत्पलमाला में कविता करो आदि प्रश्न पूछे जाते हैं। इन उदाहरणों से समझा जा सकता है कि अवधानी को कितनी कठिनाई होती है।

एक संस्कृत कविता देखिये –

प्रालेय प्रचुरा निशा, परिमलत्कुंदा लतामंटपा;
कूटाः कोकिल संकुला, जलगृहा मद्यन्मयूरिस्वरा;
व्यर्थास्यु नतदर्थम ईषदपि मे चिंता, परम जायते
किं वक्ष्यामि कुरंगनाभनयने व्यर्था शरश्चंद्रिका।

रातें हिम से कुहासे से भरी हैं। मंटप कुदों से भरे हैं। आमोंपर कोकिल है। जलगृहों में मत्त मयूर केकारव कर रहे है। हे सुंदर मृगनयने! मैं उससे परेशान नहीं हूँ। मेरी चिंता यह है, कि क्या बताऊँ? यह शरत चंद्रिका व्यर्थ जा रही है।

मछलीपट्टणम में शतावधान के अवसर पर लक्ष्मी और पार्वती के वाग्विवाद पर एक प्रश्न पूछा गया था –

---

* सीस पद्य - तेलुगु का एक देशी छन्द है।

कविता –

गंगाधरुडु नी मगडनि नव्वंग
वेषधारुडु नी पेनिमिटनिये
एददुनेक्कुनु नीदु नेम्मिकाडनिनव्व
गददनेकुकुनु नी मगंडटनिये
वल्लकाडिल्लु नी वल्लभुनकनंग
नडिसंद्रमिल्लु नी नाथुनकने
नाटचंबु सेयु नी नायकुंडननगु
कव्विंचु वेनक नी कांतुडनिये
मुष्टि केक्कडि केगे नी इष्टु डनिन
बलि मखंबुन केगे नो ललन यनिये
निट्टु लन्योन्य मर्मंबु लेंचि कोनेडु
पर्वतंबोधि कन्यल प्रस्तुतिंतु

तुम्हारा पति गंगाधर है यह कहकर लक्ष्मी हंस पडी।
तुम्हारा पति वेषधारी है पार्वती ने टोका।
तुम्हारा पति बैल पर सवारी करता है, लक्ष्मी फिर हंस पडी।
तुम्हारा पति गीध पर सवार होता है - पार्वती ने परिहास किया।
तुम्हारे प्रिय का घर स्मशान है - लक्ष्मी ने टोका।
तुम्हारे पति बीच समुद्र में वास करते है - पार्वती ने मजाक किया।
तुम्हारे देवता नाटच करते है - लक्ष्मी ने दिल्लगी उड़ाई।
तुम्हारे देवता पीछे रहकर शरारत करते है - पार्वती ने हंसी उड़ाई।
तुम्हारे पति भीख माँगने कहाँ गये? - लक्ष्मी ने पूछा।
बलि के यज्ञ में गये है - पार्वती ने जवाब दिया।

अंत में कवि लक्ष्मी और पार्वती दोनों देवियों को प्रणाम करते हैं। लक्ष्मी और पार्वती विष्णु और शिव की पत्नियाँ है। इन दोनों के आपसी वाग्विवाद का वर्णन करना है। उस के लिये वातावरण और संदर्भ चुनना है। पौराणिक परंपरा का उल्लंघन किये बिना यह कविता बनायी गयी है। स्त्रियाँ एक दूसरी से अपने को बड़ी बताना चाहती हैं। अपने पति का पद और गौरव दिखाकर उसे सिद्ध करना चाहती है। इसका सुंदर वर्णन इस कविता में है।

कोट रामचंद्रपुरम के अवधान की इन्द्रधनुष की कविता देखिये।

परिणामोज्वल पंचवर्णयुत मै भाव्योदयं बै महा
परितोषास्पद मै मयूर विलसत् बह्मोपमानम्मुनै

सरविन् हालिक जातिकेंतयुनु नुत्साहंबु संधिपुचुन्
वरलेन् मेघ घटंबुपै मघवु चाप बेंतयुन् विंतगन् ।

पंचरंगों से प्रकाशित होकर, भविष्य के उदय की तरह, देखनेवालों का मन मोहते हुए मोर के पंखों से प्रकाशित ब्रह्म की तरह बरसा के राजा का धनु किसानों का हर्ष बढाते हुए प्रकाशमान हो रहा है। किसानों का भी ख्याल कवि रखते है।

कुछ समस्याओं की पूर्ति भी कवियों ने अवधानम के अवसर पर ही की थी। कुछ उदाहरण प्रस्तुत किये जाते है।

एक समस्या संस्कृत में दी गयी थी –

"व्याघ्रो मृगम् वीक्ष्यहि कांदिशीकः"

बाघ हिरण को देखकर डर गया। यह इसका अर्थ है। यह तो अस्वाभाविक है। कवि कहते है -

शृतेपि मन्नामनि कांदिशीको
रामो भवे दित्यभयम् वदंतम्
सीतेत्यवोचत् दशकंधरम् चेत्
व्याघ्रो मृगं वीक्ष्य हि कांदिशीकः

रावण ने कहा – सीते! मेरा नाम सुनते ही राम डर जायगा। भाग जायगा। सीता ने जवाब दिया – अगर बाघ हिरन को देखकर डर जाता है तभी यह संभव है। यानी असंभव है।

दूसरी समस्या –

गणचतुर्थिनाडु फणिचतुर्थि

गणेश चतुर्थी के दिन नागचतुर्थी है। नागचतुर्थी कार्तिक मे आती है, गणेश चतुर्थी भाद्रपद में।

ये दोनों कभी एक साथ न आयेंगी। पंक्ति को तोड़कर कवियों ने कविता लिखी।

एन्नि दिनमुलाये निट नन्नुदिंचि नी
वरिगि यनिन पत्निकनिये भर्त
नेटिकेन्नग पदिनेललायगा नेडु
(गणेशचतुर्थि नाडु फणिचतुर्थि)

मुझे मायके में छोडकर आपके गये कितने दिन हो गये? पत्नी के इस प्रश्न का पति ने जवाब दिया – आज तक दस महीने हुए है। उस दिन जब मैं गया गणेशचतुर्थी

थी, आज नागचतुर्थी है।

अवधानम में तरह तरह के लोगों को संतुष्ट करना पडता है। पृच्छकों के संस्कार का भी यहाँ सवाल आता है। प्रश्न कभी बहुत टेढे-मेढे आते हैं। कोई भी प्रश्न हो, कवि को गंभीरता से उस पर ध्यान देना पडता है। जवाब देना पडता है।

एक बार एक प्रश्न आया –

सति सति कलियंग पुत्र संतति कलिगेनू

जब एक स्त्री ने दूसरी स्त्री से संगम किया तो लडका पैदा हो गया। यह प्रश्न बड़ा विचित्र है – कवि की पूर्ति देखिये –

अति कुतुकंबलरारग
चतुरत मेरयंग मदनशास्त्र विधमुनन्
वितंतबुगु ना सौध व
सति सति कलियंग पुत्र संतति कलिगेन

काम शास्त्र में प्रवीण तथा उत्कट वासनावाले रसिक ने अपने बडे भवन में अपनी सती के साथ काम क्रीडा की, तो पुत्र का उदय हुआ। पहला शब्द सति को कवि ने वसति बनाया। वसति का अर्थ है भवन। मकान वसति में सति के साथ क्रीडा की। यह अर्थ निकला।

एक और समस्या एकदम अश्लील दी गयी थी।

"संध्या वंदन माचरिंपवलदा चौसीति बंधंबुलन्"

इसका अर्थ चौसीति बंधनों के साथ संध्यावंदना न करनी है? संध्या वंदनम एक पवित्र कार्य है। संध्या की उपासना बड़ी श्रध्दा के साथ की जाती है। चौसीति बंधन कामक्रीडा के विविध तरीके है।

कामक्रीडा के बंधनों से संध्या वंदना का क्या संबंध? यह समस्या थी। कवियों ने प्रश्नकर्ता की शरारत को समझते हुए उसे सुंदर रूप दिया। कवियों ने एक संदर्भ का निर्माण किया। एक नवयुवती एक विद्वान नवयुवक ब्राह्मण को ललकारती है। कहती है - तुम अपना यौवन, व्यर्थ करते हो।

कविता –

विंध्याद्रिप्रभनोप्पु बल् कुचमुलन् चेपट्टि पेंपोदु का
मांध्यंबार्पग् लेकं वेर्रिवले नेला मंचि ईरातिरिन
वंध्यं जेसेदु कामु केलियनंगा पांडित्यमा? लेक नी
संध्यावंदनमा? चरिंप वलदा चौसीति बंधंबुलन्?

मेरी कामवांछा को तृप्त करने में विफल होकर, विंध्यपर्वत के समान सुशोभित मेरे कुचों को पकडे बिना - दबाये बिना - पागल की तरह इस मधुर रात्रि को क्यों व्यर्थ करते हो? कामक्रीडा माने विद्वत्ता है? संध्यावंदना है? तुझ पर मुझे दया आती है। चौरासी बंधनों के जरिये नारी संगम का आनंद उठाना है। आचरिंपवलदा चरिंपवलदा इन दोनों शब्दों पर यहाँ ध्यान देना है। पहले शब्द का अर्थ "करना" है। दूसरे शब्द का अर्थ अपने को उसके अनुकूल बनाकर "काम करना" है।

इन दोनों महा कवियों ने जनमानस को मोड देने का, रस संचार करने का प्रयत्न किया है। उन्होंने करीब 200 अवधानम किये हैं। उनकी पूरी अवधानम की कवितायें 'शतावधान सारमु' के नाम से पुस्तक के रूप में प्रकाशित है।

5.
महाराजा, राजा और जमीन्दार

तिरुपति शास्त्री और वेंकट शास्त्री संस्कृत और तेलुगु के महान विद्वान थे। कवि थे। स्वाभाविक रूप से वे राजा महाराजाओं से आदर चाहते थे। वह समय भी ऐसा था – कि कविता करने मात्र से पेट भरना संभव नहीं था। अमीरों तथा राजा-महाराजाओं से आदर पाना, आर्थिक सहयोग पाना कवियों के लिये आवश्यक था। राजा महाराजाओं में कुछ विद्वत्ता के प्रेमी थे। वे कवियों का आदर करते थे। कुछ लोग परंपरागत ढंग से विद्वानों का आदर करते थे।

हमारे दोनों कवि स्वतंत्र विचार रखने वाले थे। उन्होंने किसी के भी सामने कभी सिर झुकाया न था। विद्वानों की परिषद में परीक्षा दिये बिना उन्होंने किसी से कोई पुरस्कार स्वीकार न किया था। इस विषय में कई कठिनाइयों का सामना भी उन्होंने किया था। एक तो यात्रा करना कठिन था। दूसरा भोजन तथा आवास की कठिनाई थी। जब तक राजा से इनका साक्षात्कार न होता तब तक यह कठिनाई रहती थी। राजा का साक्षात्कार मिलना भी बहुत कठिन था। ईर्ष्यालु अधिकारी तथा स्थानीय विद्वान इन्हें बहुत तकलीफ देते थे। राजा से मिलने न देते थे। इन कठिनाइयों का सामना करते हुए अन्य विद्वानों को परास्त करके राजा से जयपत्रिका लेकर ये बाहर आते थे। कई राजाओं ने तरह तरह से इनका सत्कार किया। सोने के आभूषण दिये। कपडे. दिये। पैसा भी दिया। कुछ राजाओं ने उन्हें वार्षिक वृत्ति पैसे के रूप में दी।

कविद्वय सबसे पहले वेंकटगिरि दरबार में गये थे। चेलिकानि गोपालराव के पास इन्होंने एक पत्र भेजा। गोपालराव वेंकट गिरि राजा के निकट संबंधी थे।

राजानो विरलाः स्ततोपि गुणिनः तत्रापि विद्याप्रियाः
तत्राप्युत्तमपांडितीपरिचिताः गोपाल भूमीपतिः
विद्वांसो विरलाः स्ततोपिकवयः तत्राशुधाराचणाः
स्तत्रापिह्यवधानिनः स्तदुभयम् दैवेन राशीकृतम् ।

राजा बहुत कम हैं। उनमें भी गुणवान बहुत कम हैं। उनमें भी विद्वान कम है। वैसेही कवि बहुत कम हैं। उनमें भी आशुकविता निपुण और भी कम हैं। उनमें भी

अवधान करनेवाले और कम हैं। भगवान ऐसे राजा तथा ऐसे कवियों को आज एक जगह ले आये है। दूसरा अर्थ यह है जिस के पास विद्वत्ता रहती है, वह गरीब होता है। जिसके पास धन रहता है उसके पास विद्या न रहती है। हमारा भाग्य है – आप में विद्वत्ता भी है, धन भी है। हम कवि है, और अवधानी भी है। उस समय की स्थिति का भी इससे परिचय मिलता है।

वेंकटगिरि में कवियों ने अपने को राजा कहा है। दूसरे पत्र में कवियों ने वेंकटगिरि राजा के पास यह कविता भेजी –

परदेश संपादन रति मीकु नरेन्द्र !
परदेश संपादन रति माकु
ईषदुत्तम पदाभिलाष मीकु नरेन्द्र !
ईषदुत्तम पदाभिलाष माकु
सकल नृत्याश्लोक शक्ति मीकु नरेन्द्र !
सकल नुत्याश्लोक शक्ति माकु
मनु मार्गवर्तनं बनुवु मीकु नरेन्द्र !
मनुमार्ग वर्तनं बनुवु माकु
मीकु राजपदमु माकु कवि राज
पदमु कलदिकेंदु गोडवलेदु
गान साम्य मीक्षिंचि मन्निंचुटोप्पदे
मुददकुकृष्ण राय भूवरेण्य

आप अन्य देशों पर विजय करना चाहते है। हम दूसरे देशों में कमाना चाहते है। आप अच्छा पद चाहते है, हम भी चाहते है अच्छे पद और शब्द। आप कीर्ति चाहते है, हम अच्छे श्लोक चाहते है। मनु के बताये मार्ग पर चलना आपको पसंद है। हम भी वही चाहते है। आप राजा है। हम कविराजा है। हम दोनों में इतनी समता है। इसलिए क्या हम सम्मान पाने लायक नही है?

गद्वाल, वेंकटगिरि, आत्मकूर आदि स्थानों में कवियों को तरह तरह के अनुभव मिले है। विजयनगर राजा के यहाँ उन्हें जो अनुभव मिला, वह और भी विचित्र है। महामहोपाध्याय ताता सुब्बराय शास्त्री के नाम से किसीने कविद्वय को पत्र लिखा कि विजयनगर मे महाराजा श्री आनंद गजपति उनसे मिलना चाहते है। कविद्वय जब विजयनगर पहुँचे तो उन्हें मालूम हुआ कि सुब्बराय शास्त्री ने कोई पत्र नही भेजा। पता लगा कि शायद काशीनाथ ने वह पत्र लिखा है। उसके बाद वे विद्वान लक्ष्मीनरसिंहम से मिले, तो उन्होंने राजा से उनकी भेंट कराने का वचन दिया। पर दीवान कोदंडराव ने बताया कि राजा से कवि मिल न सकेंगे, पर मेरे यहाँ अवधानम का प्रबंध किया

जायगा। कवियों ने बताया अगर महाराजा उनसे मिलना नही चाहते हैं तो उन्हें धन की जरूरत नहीं है। उसके बाद महाराजा कॉलिज के प्रिन्सपाल किलांबि रामावतारम ने अवधानम का प्रबंध किया और उनका सम्मान किया। अंत में कोदंडराव ने रामावतारम की सहायता से महाराजा के सम्मुख कविता पाठ का प्रबंध किया। महाराजा आनंद गजपति साहित्य तथा अनेक विद्याओं के पारंगत विद्वान थे। वे किन्हीं अनिवार्य कारणों से उनसे मिल न पाये। अंत में महाराजा ने कवियों की प्रतिभा स्वीकार की। उनका आदर किया।

कवियों ने कई राजाओं से इस तरह का आदर व सम्मान प्राप्त किया। उनकी सूची अनुबंध में दी जाती है।

आत्मकूर से सीताराम भूपाल ने श्रीनिवास कल्याण काव्य का, संस्कृत से तेलुगु में अनुवाद करने का अनुरोध किया। कवि सार्वभौम कृष्णमाचार्य ने संस्कृत में वह ग्रंथ लिखा था। उसका अनुवाद करना बहुत कठिन माना जाता था। हमारे कवियों ने छः महीनों में उस का अनुवाद पूरा किया।

पोलवरम जमीन्दार ने एड़िवन अर्नाल्ड कृत अंग्रेजी पुस्तक लाईट आफ एशिया का तेलुगु में अनुवाद करवाना चाहा। बुद्ध चरितम के नाम से कवियों ने उसका अनुवाद किया। वह ग्रंथ उसी जमीन्दार को समर्पित किया गया।

वीरवरम के सर्वराय को "एलामहात्यम" समर्पित किया गया।

जयपूर के विक्रम देव वर्मा ने इनका सम्मान किया, तो उस अवसर पर विक्रम चेल्लपिल्लमु लिखा गया।

पिठापुरम के जमीन्दार के नाम पर जातकचर्य समर्पित हुई।

बोब्बिलि राजा के पट्टाभिषेकम के समय पर बोब्बिलिपट्टाभिषेकम पुस्तक लिखी गयी।

इस तरह से कवियों की कई पुस्तके प्रकाशित हुई। आत्मकूर में गजारोहणम द्वारा कवियों का सम्मान किया गया। वह अपूर्व आदर था। उससे इन कवियों की कीर्ति में चार चाँद लग गये थे।

लेकिन उनकी बहुत सी कृतियाँ स्वयं प्रेरणा से लिखी गयी है। उन कृतियों की संख्या अधिक है।

6.
कृतियाँ

दोनों महा कवियों ने कितनी ही उपाधियाँ प्राप्त की थी। कितना ही आदर प्राप्त किया था। जनता ने तथा अमीर राजाओं ने स्वयं प्रेरणा से उनका गौरव किया था। वेमवरम अग्रहारम में अवधानम के बाद ब्रह्मरथोत्सव का प्रबंध किया गया था। वह उत्सव सिर्फ भगवान के लिए ही किया जाता है। वह महान आदर कवियों को वेमवरम मे मिला। वेमवरम राजधानी नगर नहीं है। एक गाँव है। यह अभूतपूर्व गौरव कवियों को मिला है।

उनकी उपाधियों में किकवींद्रघटापंचानन, बालकलानिधि, 'बालसरस्वति', 'विद्वत्कवि' कलाप्रपूर्ण आदि मुख्य हैं जिनका कवि अपने नाम के साथ उपयोग करते थे। कलाप्रपूर्ण आंध्र यूनिवर्सिटी की दी गयी उपाधि है। किंकवीन्द्रघटापंचानन का अर्थ कविरूपी हार्थियों के लिए सिंह है। पर कवि अपने को शतावधानी कहलाना ज्यादा पसंद करते थे। उनकी कृतियाँ उनकी उपाधियों का समर्थन करती हैं। संस्कृत और तेलुगु दोनों में उन्होंने लिखा है। उनकी संस्कृत कृतियों का परिचय देना आवश्यक समझता हूँ। उसके बाद तेलुगु कृतियों का परिचय दिया जायगा।

उनकी प्रमुख संस्कृत रचना धातुरत्नाकरम है। वह चंपू काव्य है। पाणिनी के क्रियासूत्रों का प्रयोग करते हुए रामायण की कथा चंपूकाव्य के रूप में चित्रित की गयी है। शृंगार शृंगाटक एक वीथि नाटक है। "कालीसहस्रम" में तीन सौ श्लोक हैं, पर वह अपूर्ण है। वेंकटाधूरि के लक्ष्मी सहस्रम के नमूने पर यह लिखा गया है। नेल्लूर की जनता के आग्रह पर आर्यावृत्त छंद में मूलस्थानेश्वर स्तोत्रम लिखा गया है। 'शुकरंभा संवादम' एक काव्य है। इस में महर्षि शुक और अप्सरा रंभा के बीच वार्तालाप कराया गया है। शुक महर्षि आनंद को चरमावस्था बताते है। रंभा शृंगार के अर्थ में उसकी व्याख्या करती है। काशी में वेंकट शास्त्री ने कई अष्टक लिखे थे। काली, अन्नपूर्णा, विश्वेश्वर, गणपति और काल भैरव पर वे अष्टक है। 'नमश्शिवाय स्तोत्रम्' भक्तिप्रधान है। वेंकट शास्त्री शिव के भक्त थे। 1950 में महाशिवरात्री के दिन ही उनका निधन हुआ है। 'क्षमापणम', 'पिष्टपेषणम', शलभालापनम श्रीपाद कृष्ण मूर्तिशास्त्री तथा वेंकट शास्त्री के विवाद पर लिखी गयी है।

उनकी मौलिक संस्कृत कृतियाँ दस तक हैं। संस्कृत ग्रंथों के उन के तेलुगु अनुवाद

चौबीस है। आत्मकूर के जमीन्दार श्री सीताराम भूपाल के अनुरोध पर श्रीनिवास विलासम का तेलुगु में अनुवाद हुआ है। वह अर्थालंकारों तथा श्लेष से भरा हुआ है। विद्वत्कवि के रूप में इस अनुवाद ने उन्हें प्रतिष्ठा दी। बुद्ध चरितम से भी उनका यश बढ़ा है। बुद्ध चरितम कोच्चर्लिकोट रामचंद्रा राव को समर्पित किया गया है। उसमें 600 पद्य तिरुपति शास्त्री ने, 400 पद्य वेंकट शास्त्री ने लिखे थे। अश्वघोष तथा क्षेमेन्द्र के संस्कृत काव्यों का अनुसरण किया गया है। बुद्ध चरितम के अनुवाद से प्रभावित होकर जमीन्दार ने उन्हें अपने दरबारी कवि बनाना चाहा तो वेंकटशास्त्री ने माना नहीं, पर तिरुपति शास्त्री को उन्होंने राजी कर दिया। उसके फलस्वरूप तिरुपतिशास्त्री काकिनाड गये और सरस्वती पत्रिका के संपादन का कार्यभार संभाला। 1901 से 1912 तक यह क्रम चला। उस पत्रिका के जरिये 'मार्कंडेय पुराणम', 'काकुन्स्थविजयम', 'बहुलाश्व चरितम' और 'विजयविलासम' आदि काव्य प्रकाश में आये।

उसके बाद देवीभागवतम का नाम आता है। तबतक तीन विद्वानों ने देवीभागवतम का संस्कृत से तेलुगु में अनुवाद किया था। वे थे – त्रिपुरान तिम्मय्यादोरा, पापया राध्य तथा दासुश्रीरामुलु। वेंकट शास्त्री देवी के उपासक थे। यह बडी कृति बारह स्कंधों में है। 9 वें स्कंध में से 5 तथा आखरी दोनों भागों का दिवाकर्ल वेंकटावधानी ने अनुवाद किया तो बाकी का निशंकुल कृष्णमूर्ति तथा आकोंडिराममूत्रि ने अनुवाद किया। 12 वें स्कंध को चिन वेंकट शास्त्री ने अनुवादित किया। पूरी पुस्तक के अनुवाद की जिम्मेदारी वेंकट कवुलु ने ली। यह कृति चर्लब्रह्मय्या शास्त्री को समर्पित है।

स्कंदपुराणम का इन कवियों ने 'शिवलीललु' के नाम से अनुवाद किया। यह बहुत बडा काम था। कुछ कहानियाँ अन्य पुराणों से भी ली गयी। जब यह कृति बहुत लोकप्रिय हुई तब इनमें से कुछ चुनी हुई कहानियाँ पुराण गायन तथा ब्रतकथा के नाम से प्रकाशित की गयी।

रसिकानंदमु कालिदास के कुछ शृंगारी कविताओं का अनुवाद है।

अल्पय्य दीक्षित के 74 श्लोकों का अनुवाद वैराग्यशतकम के नाम से प्रकाशित है।

शुकरंभासंवादम इन्हीं कवियों के संस्कृत ग्रंथ का तेलुगु अनुवाद है।

संस्कृत कृतियों में राजशेखर का बालरामायण, विशाखदत्त का मुद्राराक्षस, शूद्रक के मृच्छकटिक नाटकों का तेलुगु अनुवाद प्रकाशित है। बलिजेपल्लि लक्ष्मीकांत कवि ने जो वेंकट शास्त्री के शिष्य हैं, अमात्यराक्षस का अभिनय किया था। ये नाटक सरस्वती पत्रिका में प्रकाशित हैं।

अब हम कवियों की मौलिक कृतियों की तरफ नजर डालेंगे। इनके अनेक मौलिक कविता संग्रह, नाटक, गद्यग्रंथ प्रकाशित है। उनके सबसे ज्यादा प्रसिद्ध काव्य दो हैं। वे 'श्रवणानंदम' तथा 'पाणिग्रहीत' हैं। दोनों का सामाजिक प्रयोजन है। श्रवणानंदम में वेंकट शास्त्री के अनुभव का वर्णन है, ऐसा कहा जाता है। एक देवदासी बालामणि

मधुसूदन को प्यार करती है। मधुसूदन एक कवि है। इन दोनों का एक विवाह के अवसर पर साक्षात्कार होता है। वे एक दूसरे पर अनुरक्त होते हैं। देवदासी होने पर भी बालामणि ने वचन दिया कि मधुसूदन के प्रति नैतिक मूल्यों का वह पालन करेगी। पर एक बार बालामणि ने वचन भंग किया तो दोनों का संबंध टूट गया। यह काव्य तेलुगु में एक लिरिकल काव्य है। जब यह पुस्तक प्रकाशित हुई तो यह इतनी प्रसिद्ध हुई कि कई लोगों की जबान पर इसके पद्य चढ गये थे। तत्कालीन एक मैजिस्ट्रेट ने अश्लील बताकर इसे निषिद्ध करने का प्रयत्न किया था। कहा जाता है कि वेंकट शास्त्री ने उस अधिकारी को शाप दिया तो अधिकारी बीमार हो गये और अंत मे मर गये। देवदासी प्रथा, शादी आदि के समय देवदासियाँ के नृत्य आदि उन दिनों में प्रचलित थे। उन परंपराओं के उन नृत्यों के खिलाफ श्रवणानंदम मैं आवाज उठायी गयी थी। मधुसूदन कहते हैं, हे मनु! अब बस है। मेरा सुनो, इस प्रथा का अंत करो। भारतीय चेतना को उदवुद्ध करने का प्रयत्न इस काव्य में मिलता है।

पाणिग्रहीत उनकी दूसरी कृति है। पाणिग्रहण माने शादी है। तेलुगु में पाणिग्रहीत का रूढि अर्थ होता है रखैल। इसकी कहानी भी सामाजिक है। जलजाक्षी नामक एक वेश्या अपने पूर्व प्रिय को छोडकर 'उदार' नामक दूसरे व्यक्ति की रखैल बनती है। अंत में वह आत्महत्या कर लेती है। इसमें शृंगार रस का रसाभास है। बाल्य विवाह की समस्या इस में चर्चित है। विधवा समस्या, वेश्यावृत्ति, अनैतिकता आदि समस्याओं का इस में चित्रण किया गया है। इस काव्य में वेश्या वृत्ति की निंदा करने तथा नौजवानों को सही रास्ता दिखाने का प्रयत्न किया गया है।

'लक्षणा परिणयम' तथा 'एलामहात्यम' पौराणिक काव्य हैं। लक्षणा के साथ कृष्ण की शादी का इस काव्य में तीन सर्गो में वर्णन किया गया है। दो सर्गो में एलामहात्य का वर्णन है।

'गोदेवी' एक छोटा सा काव्य है जिसमें गोव्याघ्र संवाद वर्णित है। पतिब्रता एक काव्य है जिस में सुशीला का विवाह एक सांप के साथ किया जाता है। उसका वर्णन है। पूर्व हरिश्चंद्र चरितम पौराणिक है तो कालकंधरचरितम आधुनिक काव्य है। सुखजीवी ईदर वेंकटरान की जीवनी है।

'जातकचर्य', 'इटीवलिचर्य' दोनों वेंकटशास्त्री की अमूल्य रचनाएँ हैं। विक्रमांक चरित्र में बिल्हण तथा बाण की जीवनी वर्णित है। इससे प्रभावित होकर वेंकटशास्त्री ने जातकचर्या शुरू की है। यह सीधी आत्मकथा नहीं है। पर आत्मकथा जैसी ही है। ज्योतिष में वेंकटशास्त्री जी का अटूट विश्वास था। ग्रहों की दशामुक्ति के आधार पर उन्होंने जातकचर्या में कई घटनाओं का वर्णन किया है। यह पुस्तक आत्मकथा भी है और ज्योतिषशास्त्र का विवरण भी है। कंदुकूरि विरशलिंगम पंतुलु तेलुगु के प्रथम आत्मकथा लेखक है। वेंकट शास्त्री ने 1900 में ही जातकचर्य लिखना आरंभ किया है। कोक्कोंड वेंकट रत्नम, मण्डपाक पार्वतीश्वर शास्त्री आत्मकथा के प्रारंभिक लेखकों में हैं। कोक्कोंड वेंकट रत्नम

की आत्मकथा 1893 में, मण्डपाक की 1894 में पूरी हुई है। वीरेशलिंगम जी ने 1902 में आत्मकथा लिखी है। वेंकटशास्त्री की जीवनी का साठ साल का विवरण जातकचर्या में, उसके बाद का विवरण 'इटीवलिचर्या' में मिलता है।

पोलवरम राजा के निधन पर तिरूपति शास्त्री ने 'कृष्ण निर्याणम' काव्य लिखा। 'सूर्यनारायण स्तुति' तिरूपति शास्त्री की रचना है।

अपनी धर्मपत्नी के निधन पर वेंकट शास्त्री ने सतीस्तुति लिखी है। तिरूपति शास्त्री के निधन पर वेंकट शास्त्री ने 'दिवाकर अस्तमयम' लिखा है।

'पट्टाभिषेक पद्यमुलु' सरस्वती में प्रकाशित हैं। एड्वर्ड की राजगद्दी पर बैठने के उपलक्ष्य में वे लिखे गये हैं।

वेंकट शास्त्री ने छोटी छोटी बहुत सी रचनाएँ की है। अपने पारिवारिक जीवन पर वेंकट शास्त्री ने 'दैवतंत्र' लिखा है। अपने निजी अनुभवों का कामेश्वरी शतकम में (107 शब्दों में) चित्रण किया है। अपने पुत्र के आरोग्य के लिये 'आरोग्य कामेश्वरी स्तुति' दो सो पद्यों में लिखी है। अपने स्वास्थ्य के लिये 'आरोग्य भास्कर स्तव' 214 पद्यों में लिखा है।

'मृत्युंजयस्तव' व्यंग्य से भरा काव्य है। उसमें कवि मृत्युंजय से अपना स्वास्थ्य शुल्क के रूप में पाना चाहता है। सौभाग्य कामेश्वरीस्तवम दो खंडो में है। पहले खंड में 612 पद्य और दूसरे खंड में राष्ट्र के हित में कुछ प्रार्थना है। शिवभक्ति पाँच सर्गो में है तो शिवस्तव भक्ति प्रधान है।

अपने जीवन में इन कवियों ने कई संघर्षों का सामना किया था। वे दोनों कवि बहुचर्चित और बहुतविवाद के कारण बने थे। पहला झगडा उनका 'ओलेटि राम कृष्ण कवि' तथा 'वेदुल रामकृष्ण शास्त्री' से हुआ। उन दोनों को रामकृष्ण कविद्वय कहा जाता था। वे दोनों वेंकट शास्त्री के शिष्य थे। अवधानम करते थे। वे पिठापुरम जमीन्दार के दरबारी कवि बने और कविता नामक पत्रिका चलाते थे। कविता में तिरूपति वेंकट कवुलु की टीका टिप्पणी प्रकाशित होने लगी तो झगडा शुरू हो गया। भारतमु के बदले तिरूपति वेंकट कवियों ने 'गीरतमु' लिख दिया। इस कृति में उस समय के सामाजिक आचार- विचार आदि व्यक्त किये गये। इस झगडे के कारण तिरुपति वेंकट कवि अन्यापदेश काव्य भी लिखने लगे थे। तिरूपति शास्त्री ने तिरूपति वेंकटेश्वर अर्थशतकम तथा 'बिडालोपाख्यानम' लिखे थे। वे वेलूरि शिवराम शास्त्री के नाम से प्रकाशित हुए। शिवराम शास्त्री तिरूपति वेंकट कवुलु के शिष्य थे। वेंकटशास्त्री ने 'ग्राम सिंहमु' तथा व्यास निष्कासनमु दो पुस्तकें लिखीं थीं। राम कृष्ण कवुलु ने तिरुपति कवुलु के 'पांडव राजसूयमु' की बडी टीकाटिप्पणी की तो उसे शतघ्नि के नाम से प्रकाशित किया तो उसके जवाब में हमारे कवियों की 'पाशुपतमु' और 'पुनश्चर्य' दो पुस्तकें प्रकाशित हुईं। रामकृष्ण कवुलु के एक शिष्य ने 'श्रवणानंदम' तथा 'पाणिग्रहीत' की श्रृंखला नाम से निंदा की तो तिरुपति वेंकट कवुलुने 'श्रृंखलातृणीकरणमु' पुस्तक प्रकाशित की।

इन कवियों का दूसरा झगडा कोप्परपु कवियों के साथ हुआ। कोप्परपु कवुलु आशु कविता लिखनें में प्रसिद्ध थे। वे गुंटूर के निवासी थे। वेंकट शास्त्री मछलीपट्टणम में तेलुगु पंडित के पद पर थे। तिरुपति वेंकट कवुलु अवधानम के लिये गुंटूर गये थे। गुंटूर में वैदिक ब्राह्मण तथा नियोगी ब्राह्मण आपस में झगडते थे। कोप्परपु कवुलु नियोगी ब्राह्मण थे तो तिरुपति कवुलु वैदिक ब्राह्मण थे। इन दोनों के बीच में किसी ने झगडा पैदा किया। इस झगडे के कारण तिरुपति वेंकट कवुलु की 'गुंटूर सीमा' तथा 'रासभकुमारुडु' दो कृतियाँ प्रकाश मे आयी। 'संगदोषम' कृति भी उसी अवसर पर प्रकाशित हुई। पहला झगडा अपने शिष्यों के साथ हुआ तो दूसरा झगडा ब्राह्मणों की दो उपशाखाओं के बीच में हुआ। तीसरा झगडा वेंकटशास्त्री के गुरू महामहोपाध्याय श्रीपाद कृष्णमूर्ति शास्त्री से हुआ। कृष्णमूर्ति शास्त्री ने कोप्परपु कवुलु के झगडे में तिरुपति कवुलु का समर्थन किया था। इस संदर्भ में उन्होंने कई लेख भी लिखे थे। पर न जाने क्यों कृष्णमूत्रि शास्त्री मन ही मन तिरुपति कवुलु से ईर्ष्या करने लगे और बोब्बिलि 'पट्टाभिषेकम' काव्य के खिलाफ हो गये। इस के अलावा और एक घटना हुई। वह यह कि तिरुपति वेंकट कवुलु ने 'चेल्लपिल्ल जयंती' एक पुस्तक लिखी थी। इसके अलावा 'क्षमार्पणिम' और पिट्टपेषणम लिखी थी। इन कृतियों से गलतफहमी और बढ गयी।

तिरुपति वेंकट कवुलु हमेशा सत्य के लिये लड़ते थे। अगर दुश्मन भी है तो भी उनके काव्य में अच्छा गुण मिले तो वे उसकी प्रशंसा करते थे। उत्तेजना की स्थिति में भी अपने गुरू का आदर करते थे। अपशब्द न लिखते थे। 'क्षमार्पणम' इसका अच्छा उदाहरण है।

इन झगडों के कारण तेलुगु में जो साहित्य छपा, प्रकाशित हुआ, उसका एक विशिष्ट स्थान हो गया।

'शनिग्रहमु' एक अन्यापदेश काव्य है, जो एक वैष्णव विद्वान के खिलाफ लिखा गया है। उस विद्वान ने आत्मकूर दरबार में इन कवियों को बहुत सताया था। इनकी कृतियाँ 'मल्लेश्वर विज्ञप्ति' तथा 'शिवशंकरविज्ञप्ति' अपने गाँव के लोगों की दी गयी तकलीफ के खिलाफ लिखी गयी है।

'शतावधानसारम्' भिन्न भिन्न अवधानों के अवसर पर रची कविताओं का संकलन है। भिन्न भिन्न जमीन्दारों से मिलते समय जो कविताएँ बनीं, उनका संग्रह 'नाना राजसंदर्शनमु' है। 'कलगूरगंप' विचित्र कृति है, जिसमें संस्कृत में लिखी आत्मबोध कविताओं का संकलन है।

उनके मौलिक नाटक एक दर्जन से ज्यादा हैं। उन के लिखे प्रहसन भी कई हैं। उनका पहला नाटक 'पंडितराज' है। उसमें दिल्ली के पंडित जगन्नाथ राय की मुसलमान लडकी से हुई शादी का वर्णन है। तिरुपति वेंकट कवुलु पंडित जगन्नाथ को बहुत मानते थे। उसके बाद महाभारत की कथा को चित्रित करते छः नाटक लिखे गये है। वे हैं 'पांडव जननमु', 'पांडवप्रवासमु', पांडव राजसूयमु', 'पांडव उद्योगम' तथा 'पांडव विजयम'।

उद्योगविजय नाटकों से कवियों की कीर्ति बहुत बढी है। देहातों में आज भी उन नाटकों के पद्य गानेवाले हजारों मिल जाते हैं। वे नाटक इतने प्रसिद्ध हुए हैं कि उन नाटकों का मंचन करनेवाले करीब 400 परिवारों का इन नाटकों के प्रदर्शन से भरण पोषण हो रहा है।

'अनर्घराघवम' एक नाटक है। उसमें चित्रित है नारद भी माया को जीत न सके। नारद विष्णु के आदेश से एक सरोवरम में स्नान करके स्त्री बन जाते है और माया के वश में हो जाते है। यह बहुत सुंदर नाटक है। 'दंभवामनमु' और एक नाटक है। यह भी पौराणिक है। वामन अवतार की कथा उसमें चित्रित है। 'सुकन्या' एक पौराणिक नाटक है। 'प्रभावती प्रद्युम्नमु' पिंगलि सूरन् के महाकाव्य प्रभावती प्रद्युम्नमु का नाटकीकरण है। तिरूपति शास्त्री ने 'गजानन विजयम' नाम से एक और नाटक लिखा है। वह सरस्वती पत्रिका में प्रकाशित हुआ है। 'व्यसनविजयमु', 'सौवर्णपात्रिकमु' और 'जीवनदानमु' उनके और तीन नाटक हैं।

प्रहसनों में पल्लेटूरि पट्टुदललु (गाँवों के हठ) 'आपूर्व कविता विलासमु', 'त्रिलोकीविजयमु', 'कविसिंह गर्जितमुलु आदि प्रसिद्ध हैं। रसाभासमु और तविटिगोट्टु दोनों शिष्टव्यावहारिक तेलुगु में हैं।

उनकी गद्य रचनाओं में 'कथलु गाथलु' चार भागों में प्रकाशित हैं। इनमें उस समय की बहुत सी सामाजिक बातों का विवरण मिल जाता है।

भारतवीरुलु, महाभारत के वीरों की कहानियाँ हैं। सतीजातकमु वेंकट शास्त्री की धर्मपत्नी की मृत्यु पर लिखा गया है।

1920 में तिरुपति शास्त्री का स्वर्गवास हुआ। उसके बाद वेंकट शास्त्री तीस साल तक जीवित रहे। मृत्यु पर्यंत याने 1950 तक लिखते रहे।

उनकी कई कृतियों का वर्णन ऊपर दिया गया है। कुछ छोटी रचनाएँ छूट सकती हैं।

7.
कविता से अनुप्राणित मानवता

कला मानवता से अनुप्राणित रहती है और वह उसके विकास के लिये है। कल्पना तथा वक्रोक्ति उसकी अभिव्यक्ति के प्राण है। कला में मानवता का परिपूर्ण अंश बना रहता है। ये लक्षण कविता के लिये, खासकर साहित्य के लिये साधारण रूप से लागू होते हैं। परंपरा से जुडे कवि-महाकवि सभी कलाकार तथा साहित्यकार प्रयत्नशील रहते हैं। इसकी सीमाएँ हैं और इसकी अपनी असुविधाएँ भी हैं। जिसका फल ठीक नहीं होगा वह ठीक नही होगा। सब व्यर्थ होगा। यह इसका दर्शन है। इसे फलचैतन्य कहा जाता है। इसे व्यवस्थाधर्म भी कहते है। चेतना के प्रमाण, प्रमेय और प्रमातृ इसके विविध उत्तर हैं। हमारे कवियों का मानवतावाद स्वयंपूर्ण है, स्वभाव जनित भी है।

तिरुपति वेंकट कवुलु इस सदी के आरंभ में सामाजिक परिवर्तन के समय में पैदा हुए थे। वे अंग्रेजी पढे लिखे न थे। वे प्राचीन संप्रदाय तथा परंपरागत विधि से शिक्षित थे। इनकी कृतियों में नवीनतम आधुनिकता की खोज करना, नयी परिभाषाओं में उन्हें जकडने का प्रयत्न करना व्यर्थ है। पर उनकी महान मानवतावादी दृष्टि हर कृति में दिखती है। वे रससिद्ध कवि हैं। उनकी भाषा लचीली है। शैली सरल है। इस संदर्भ में उनकी विशेषरूप से तीन कृतियों का उल्लेख करना उचित समझता हूँ। एक पाणिग्रहीत है, दूसरा पांडवोद्योगमु और तीसरा बुद्धचरितमु है।

पाणिग्रहीत उनकी अत्यंत प्रसिद्ध कृति है। उसका रस श्रृंगाररस का रसाभास है। नायक का नाम उदार है, यानी उदारता का प्रतीक है। नायिका का नाम जलजाक्षी है। कमल जैसे नयनवाली भी है, विशाल नेत्रवाली। विशाल नेत्र सुंदरता को ही व्यक्त नहीं करते बल्कि वे व्यक्त करते है - आश्चर्य को, पाने की इच्छा को, आनंदभोग को। उदार चाह की सभी चीजें जुटाता है। इस काव्य में नायिका की कहानी प्रधान है। नायिका एक ब्राह्मण विधवा की होशियार लडकी है। माता से परित्यक्त इस लडकी को एक वेश्या पालती है, पोसती है, बडी बनाती है। लडकी को संगीत, नृत्य आदि सभी कलाएँ सिखायी जाती है। उन सबमें वह निष्णात हो गयी थी। उसका एक प्रिय था जो निर्धन हो गया, तो उसने पैसे वाले अपने एक मित्र को समझाया और नायिका से मिलाया। नायिका ने अपने प्रिय को वचन दिया कि मैं तुम्हारा संग न छोडूँगी। प्रिय ने मान लिया। उसके मित्र का ही नाम था उदार। वह भी संगीत, नृत्य आदि

को पसंद करता था। जलजाक्षी तथा उदार का प्रेम-कलाप चलता रहा। कुछ और मित्र भी उदार के साथ मिल गये। मित्रों में एक अपने को अंग्रेजी जाननेवाला आधुनिक बताता था। वह टूटीफूटी अंग्रेजी बोलता था। वह अपने को कवि भी मानता था। धीरे धीरे जलजाक्षी उसके प्रेम में फँसी। यह न पैसे के लिये था, न सुंदरता के लिये। उसकी कविता पर वह आकृष्ट हुई थी। जलजाक्षी का व्यवहार संदेह करने लायक बना। उदार ने जलजाक्षी को त्याग दिया। उदार को समझाने और फिर से उसे अपने पास लाने की जलजाक्षी ने कोशिश की, पर उसे सफलता न मिली। अंत में विफल होकर जलजाक्षी ने विष खाकर आत्महत्या कर ली।

सच पूछा जाय तो कोई संप्रदायवादी कवि इस तरह की कहानी पर हाथ न लगायेगा। इस कहानी में रस के लिये स्थान कहाँ है? रसाभास के लिये मात्र स्थान है। नायिका वेश्या के घर से आयी है। सारी कहानी शारीरिक शृंगार के पीछे पीछे घूमती है। पर हमारे कवियों ने ऐसी कहानी अपने हाथ में ली। बाल्यविवाह, विधवाओं की दुःस्थिति, वेश्यावृत्ति आदि उस समय की ज्वलंत समस्याएँ थीं। नायिका गौरव के साथ जीवन बिताना चाहती थी। ऐसा प्रस्ताव उदार से करती भी है। प्रार्थना करती है - मुझे तुम अपनी पत्नी बनाओ। अंत में कहती है कि कम से कम मुझे अपनी दासी बनाओ। मैं सेवा करूंगी। अंत मे जब असफल होती है तो वह आत्महत्या कर लेती है। अगर जलजाक्षी उदार को धोखा देना चाहती तो उसे छोडकर चली जा सकती थी।

इस कहानी से आप सोच सकते हैं कि कवि की दृष्टि क्या है? उनकी विचार धारा क्या है? दोनों पुरुष पात्रों का विश्लेषण करके देखेंगे तो कवि की बात हम समझ सकेंगे। उसका पहला प्रिय उस लडकी से समवेदना रखता था। जब उसे "पिंप" याने दलाल अथवा कुटना बनना पडा, वह धीरे से हट गया। उदार नायिका से कहता है कि मैं पैसे के अभाव से तुम्हें स्वीकार नहीं करता हूँ यह बात नहीं है, मैं तुम से प्रेम नहीं करता हूँ, यह बात भी नहीं है। तुम ने दूसरे से संबंध जोडा, इसका भी दुःख मुझे नहीं। पर इतना अवश्य कहना चाहूँगा कि ऐसी स्थिति में जो कठिनाइयाँ सामने आती है, उनका ध्यान रखो।

कवि का समाधान सरल है। कवि की दृष्टि भी साफ है। परिस्थिति से बचने के लिए हर एक व्यक्ति को प्रयत्न करना चाहिए। पुरुषपात्रों ने अपना आत्म गौरव बचाने का प्रयत्न किया है। नायिका वह काम कर न सकी। वह कोशिश करती तो आत्महत्या न करती। उस की विचारधारा अलग थी। उदार को परेशान देखकर वह तरह तरह के प्रश्न करती है - क्या मैने रसोइयों से, धोबी से या नौकर से संबंध जोडा है? ऐसा सब वेश्यायें करती हैं। वह यह बताना चाहती है कि ऐसी गलतियाँ हो सकती है, होती हैं, उनपर ध्यान न देना चाहिए। वेश्या वृत्ति से बचकर फिर लडकियाँ उसी वेश्या वृत्ति में वापस पहुँच जाती हैं। यह बहुत जगह हम देख रहे हैं। समाज इसके लिये दोषी है। समाज सामूहिकता का एक रूप है। ऐसी शक्ति को नियंत्रण में रखना

कठिन है। व्यक्ति सही दिशा में काम कर सकता है, बढ सकता है। 'श्रवणानंदम' का नायक मधुसूदन भी ऐसा ही व्यवहार करता है। समाज पर कवियों की यह करारी चोट है।

उनकी दूसरी कृति 'पांडवोद्योगम्' है। यह नाटक कवियों का बहुत ही प्रसिद्ध नाटक है। उनके पांडव संबंधी सभी नाटकों में यह चौथा और अभिनय की दृष्टि से बहुत सफल नाटक है। इस के संवाद भी सुंदर है। पद्यों को प्रभावशाली ढंग से लिखा गया है। दुर्योधन और अर्जुन दोनों युद्ध में मदद मांगने कृष्ण के पास द्वारका जाते है। द्वारका को देखते ही अर्जुन कहते है-

अदिगो द्वारक, आलमंद लविगो अंदंदु गोराडु, अ
य्यदिये कोट, अदे अगड्त अवे रथ्यल् वारले यादवुल्,
यदुसिंहुडु वसिंचु मेड अदिगो, आलानदंतावला
भ्युदयम्मै वरमंदिरांतर तुरंगोच्चंडमै पर्वेडुन्।

वह द्वारका है। गायों के झुंड वे हैं। वह दुर्ग है। वह दुर्ग के चारों तरफ की खाई है। वे वीर्थियाँ हैं। वे यादव है। यादव सिंह कृष्ण के रहने का भवन वह है। उसके सामने जंजीरों से जकडे हाथी है। वे घोडे हैं।

यह पद्य बहुत ही उत्साह पैदा करनेवाला है। द्वारका को देखते ही अर्जुन की भक्ति की भावना संतृष्ट सी दीखती है। गाँये धर्म की प्रधानता व्यक्त करती हैं। अन्य चीजें उसकी शक्ति को स्पष्ट करती हैं। श्रीकृष्ण धर्म की रक्षा करते दिखायी देते हैं। यह पद्य पात्रधारी को रंगमंच पर एक कोने से दूसरे कोने तक घूमने का मौका देता है। चार चार कदम आगे बढकर प्रभावशाली ढंग से पद्य को पढने में सुविधा होती है। अनपढ लोग भी इन पद्यों को गाते आंध्र के कोने कोने में दिखायी पडेंगें।

श्रीकृष्ण कौरवों के दरबार में संधि की सूचना देते चार कवितायें सुनाते है।

चेल्लियो चेल्लको तमकु चेसिन येग्गुलु सैचिरंदरून
तोल्लि, गतिचे नेडुननुदूतगा बंपिरि संधि सेय नी
पिल्ललु, पापलुन प्रजलु पेंपुवहिंपग पोंदु सेयुदो
एल्लि रणंबे गूर्चेदवो येर्पड देल्पुमु कौरवेश्वरा!।

गलत हो या सही, जो भी यातना दी गयी पांडव सहते रहे। जो हो गया सो होगया। अभी उन्होने मुझे दूत के रूप में संधि के लिये भेज दिया है। कौरवेश्वर के रूप में मुझसे स्पष्ट कहो, अपने बाल बच्चों की रक्षा को दृष्टि में रखकर संधि करोगे या युद्ध।

अलुगुटये एरुंगनि महामहितात्मुडजातशतृडे
अलिगिननाडु सागरमुलन्नियु एकमुगाकपोवुने
कर्णुलु पदिवेवुरैन ननि नोत्तुरू चत्तुरू राजराज! ना
पलुकुल विश्वसिंपुमु विपन्नुल लोकुल कावुमेल्लरन

क्रोध का नाम तक न जाननेवाले अजातशत्रु युधिष्ठर अगर नाराज हो जाते है तो समुद्र सभी एक हो जायेगें। हे राजन! एक हजार कर्ण भी युद्ध में जायेंगें, मर जायेगें। मेरी बात पर विश्वास रख्खो बेचारे वे सब विपन्न हैं सब लोगों की रक्षा करो।

जेंडा पै कपिराजु मुंदु सित वाजिश्रेणियुन गूर्चि ने
दंडबुन् गोनि तोलु स्युदनमु पैनन् नारि सारिंचुचुन्
गांडीवम्मु धरिंचि फल्गुनुडु मूकन् जेंडुचुन्नप्पु डो
क्रंडुन नी मोरलालकिंपरू कुरूक्ष्मानाथ संधिंपगन

झंडे पर हनुमान, सामने सफेद घोडे, रथ पर सारथी मैं, गांडीवधारी अर्जुन जब सब युद्ध में आयेगें तुम्हारी सारी सेना नष्टभ्रष्ट हो जायेगी। उस वक्त तुम्हारा रोदन कोई न सुनेगा।

संतोषंबुन संधि सेयुदु वे वस्त्रं बूडचुचो द्रौपदी
कांतन् जूचिननाडु चेसिन प्रतिज्ञल् दीर्प भीमुंडू नी
पोंतन् नी सहजन्मु रोम्मु रूधिरंबुन् द्रावुनाडेनि नि
श्चिंतन् त्वदूरुयुगमन् त्वदीय युरमुन् छेदिंचुनाडैनन्

तुम प्रसन्नता के साथ संधि करोगे? जब द्रौपदी के चीर हरण के समय की गयी प्रतिज्ञा को पूरा करने तुम्हारे पास ही भीम तुम्हारे भाई दुश्शासन के वक्ष का रक्त पियेगा। क्या उस समय तुम खुशी से संधि करोगे? क्या उस दिन संधि करोगे जिस दिन भीम की गदा तुम्हारे ऊरू का भंग करेगी, तुम परलोक पहुँचोगे?

कृष्ण के चारों पद्य बहुत ही महत्वपूर्ण हैं। तेलुगु महाभारत में इस घटना का बहुत बडा प्रभाव है। ये पद्य साम, दान, भेद, दंड चारों उपायों पर निर्भर हैं। श्रीकृष्ण दुर्योधन से कहते है-

तुम अंतिम परिणाम पर ध्यान दो। कर्ण के साथदेने पर भी कोई प्रयोजन सिद्ध न होगा। दूसरा पद्य स्पष्ट करता हैं देरी से होनेवाले नुकसान की तरफ। तीसरा पद्य इशारा करता है अर्जुन से युद्ध भयंकर होगा। चौथा पद्य भविष्य के परिणामों का स्पष्टीकरण करता है। यह श्रीकृष्ण की तथा कवियों की मानवतावादी दृष्टि है।

इसके बाद हम 'बुद्ध चरितम' को लेंगे। इसकी कथावस्तु व्यापक है। यह कवि के अनुवादों में वरिष्ठ रहा है। वे हिन्दू हैं, फिर भी उन्होंने बौद्ध धर्म के बुद्धचरितम तथा जैन धर्म के 'चंद्रप्रभाचरितम' का बहुत सुन्दर अनुवाद तेलगु में किया है। उनके शिष्य पिंगलि लक्ष्मीकांतम तथा काटूरि वेंकटेश्वर राव ने 'अश्वघोषं के' सौदरनंदम' का अनुवाद किया है। वह ग्रंथ तेलुगु साहित्य में एक क्लासिक कृति बन गया है।

गौतम बुद्ध की कहानी बहुत ही प्रसिद्ध कहानी है। कवियों ने दयावीर तथा शांतरस को प्रधान मान लिया है। श्रृंगार, करूणा तथा बीभत्स रस सहायक रहे है।

पूरी रचना भावों में आर्द्रता लिये प्रस्तुत हुई है। भाषा उसके अनुरूप है। खासकर यशोधरा की लाल ओंठों की तरफ बुद्ध की दृष्टि जाती है -

मृदुलंबंचु नेरिंगियुन् समुल्लीलन् मनोजाग्नि दाह
दसन निर्दयं-बुद्धिनैं प्रतिपदं बत्या-र्तिनोंदिचु ना
यदयस्त्वंबु सहिंचि स्वीय मगु रागाध्यात्वमुन् वीड को
यधरम्मा सेलविच्चि पंपुमु कृपयातैत्मक चित्तंबुनन् (3-60)

मुझे तुहारी मृदुता मालूम है। फिर भी मनोज के आवेश में मैनें तुम्हे पीडा पहुँचायी है। मेरी निर्दयता को जानते हुए तुमने अपनी लालिमा न छोडी।

अपनी पत्नी को त्यागते वक्त गौतम को जो दुख हुआ उसके लिये उन्होंने जो संघर्ष किया, नीचे के पद्य में उसे देखिये।

ओक कों-तेंगुनु संशयिंचुनु समुद्युत्कत्वमुन जेंटु
वेरोक कों-तेगुनु यथास्थितिनगुनु निरूद्योगम्मुवाटिंचु
वेन्ककु दोतेंचुट किच्चगिचुनट सन्यासाधियेयौनुगा
ककटा येव्वनिकेनि शक्यमगुना यर्था-गि वारिचुटल्। (3-69)

यशोधरा से कुछ दूर जाता है, संकोच करता है, फिर कोशिश करके कुछ दूर जाता है। ठहर जाता है। कुछ आगे कदम बढा नही पाता है। संन्यास लेना चाहने पर भी पत्नी को छोडना उतना आसान नहीं है।

उसका प्रिय सारथी चेन्ना उन्हें मनाना चाहता है, । जाने से उन्हें रोकना चाहता है।

मिसिमिनेसगु प्रायमुनु मेटिसिल्लकडलेनि राज्यमुन
रसिकतयुन् पसंदोसगु राकोमरूंडवु साध्वियैन नीदु
सति नकारणमु बीडि दोगंतनम्मुन रात्रिवेल सन्यासमु पून
सुखमौने विराग मेरिकिन (3-71)

आप राजा है, नव यौवन में है, अपार ऐश्वर्य, विशाल राज्य, मनोरंजन के असंख्य साधन है। ऐसी स्थिति मे रहते बिनाकारण आप अपनी पत्नी को छोडना चाहते है। वह भी रात के समय। आप वैराग्य धारण करना चाहते है। उससे किसी को क्या सुख मिलेगा?

स्थलमुन पंडगावले, प्रसादमटंचुनु साधुवुलिच्चु
भिक्षलु ग्रहियिंपगावले, पोसंगदु वेलकु तिंडि, तिन्नचो
निलुवगरादु निल्चिननु निल्चिन चोट परुंडरादु
नीतरमगुने यतित्वमुनु ताल्चुटयुन् नरपाल बालका! (3-72)

संन्यासी को भूमि पर सोना है। गृहिणियों से भिक्षा स्वीकार करनी है। समय पर भोजन न मिलता है। अगर भोजन मिलता है तो उस स्थान पर वह ठहर नहीं सकता है। जहाँ ठहरता है वहाँ सो नहीं सकता। हे छोटे राजन। क्या यह सब आप कर सकते है? आप के लिये संभव है?

कोडुकुल कूतुलन गनियु कोंडोक कालमु वारि प्रापुमेल्
गुडिचियु वार्धकं-बोदव कोरिकलन दिग द्रावि राज्यमुन
गोडुकुल कप्पगिंचि कयिकोदगु सन्यसंबुकोसमे
इप्पुड प्रयतिचें दकटा। नृपुनगड्डुरीतु चेयुचुन (3-74)

बुद्धवास्था तक लडके लडकियों को जन्म देकर, उनका सहारा पाकर उस के बाद संन्यास ले सकते हैं। राज्य बच्चों को दे सकते है। पर आप आज ही संन्यास लेना चाहते है। आप के कारण महाराजा को बहुत दुःख होगा।

गौतम चेन्न के द्वारा अपने पिता को संदेश भेजते हैं।

वगवग वलदनि नोड्डुवुमु
युगमुलु गतिंयिंचिनन् वियोगमु मान्यन्
दगुवारू कलरे नित्यंबुग
मृत्युवु वेंटनंटि मोगियिचुनुंडुन

पिता जी से कहो, वे दुखी न हो। बहुत दिन साथ रहने पर भी हम कभी न कभी अवश्य बिछुड जायेंगे। मौत सदा हमारे पीछे पीछे चलती है।

गौतम सब को प्यार करते है। अपने घोडे कंटक से कहते हैं।

अदलकु मुष्णवारि नयानांचल पूरितमंचु चेक्कुलन
बडि दिगजार नाल्क दिग वंचि पदंबुल नाक बोकु
कीड्वकुमु नीकु नाकु रूण बंधमु तीरेनु नेटिकिक
नी पडिन परिश्रमंबु परिपक्व फलप्रदमी हरीश्वरा।

हे अश्व राज! गरम आँसू बहाकर दुःख न करो। तुम अपनी जिह्वा से मेरे पदों को न चाटो। दुखी न होओ। आज से हमारा संबंध पूरा हो गया है। तुमने मेरे लिये जो श्रम किया, उसका फल निकलेगा।

शांत मन प्राणिमात्र पर दया दिखाता है। वह सिर्फ मनुष्यों तक ही नहीं, सभी जीवों तक व्याप्त होता है। वह ध्यान ही कृपा है। तिरुपति वेंकट कवुलु महान मानवतावादी हैं। इनका मानवतावाद कवितामय मानवतावाद है।

8.

समापन

तिरुपति वेंकट कवुलु प्राचीन तथा आधुनिक युग के संधिकाल में तेलुगु प्रांत में पैदा हुए थे। प्राचीनता से आधुनिकता की तरफ युग बदल रहा था। उन्होंने आंध्र साहित्य के क्षेत्र में पूरा राज्य किया। उनके तीस साल के अवधानम के समय ने तेलुगु जनता में तेलुगु कविता के प्रति बडी अभिरुचि पैदा की थी। वह एक आंदोलन था। तेलुगु कविता के क्षेत्र में उसने पुनरूत्थान का कार्य किया। ये दोनों महाकवि भाव कविता के, गद्य कविता के भी अग्रदूत रहें।

संप्रदायवादी शिक्षण प्राप्त करने पर भी उन्होंने तेलुगु कविता को तथा तेलुगु नाटक को नया रूप दिया। उनकी भाषा सरल तथा प्रभावशाली थी। वे क्लासिकल शैली के अनुगामी थे, पर धीरे धीरे शिष्ट व्यवहार की तरफ भी झुके थे।

उस समय की सामाजिक परिस्थितियों तथा समस्याओं से वे भली भांति परिचित थे। जीवन के मूलभूत मूल्यों के प्रति वे आस्था रखते थे। संधियुग में रहने के कारण परस्पर विरोधी बातों का प्रवेश उनकी रचनाओं में होना भी स्वाभाविक है। उन्होने बाल्य विवाह का खंडन किया, पर देरी से होने वाली शादियों के भी वे पक्ष में न थे। उन्होंने शारदा ॲक्ट का समर्थन न किया था। वे गांधी जी के भक्त थे। उनकी प्रशंसा में बहुत लिखा, पर यह भी मानते थे कि उनके सिद्धांतों का पूर्णतया पालन करना संभव नहीं है। उन्हों ने तेलुगु में ग्रामीण जनता की बोली को पत्रिकाओं के लिये उपयुक्त समझा, पर काव्य रचना के लिये व्याकरण सम्मत सरल तेलुगु को अपनाया।

उन्होने अपने को कभी समाजसुधारक न माना। वे कवि थे, नाटककार थे। वे मानवतावादी थे। इससे स्पष्ट होता है कि उन्होने कभी अपने किसी आदर्श की स्थापना के लिये प्रयत्न न किया।

उनकी कृतियों की गुणवत्ता तथा बहुसंख्या को देखते हुए हम निस्संकोच कह सकते हैं कि वे बीसवीं सदी के तेलुगु साहित्य के पथप्रदर्शक हैं। युगप्रवर्तक हैं। उनके श्रवणानंदम, पाणिग्रंहीत, बुद्धचरितम, पांडवोद्योगविजय, कथलु,- गाथलु विश्व साहित्य में स्थान पाने योग्य है।

जयंति ते सुकुतिनो रससिद्धाः कवीश्वरा।
नास्ति तेषाम, यशः काये जरामरणजम, भयम

महान कवि जिनके शरीर को बुढापे का डर नहीं, मृत्यु का भय नहीं रहता है वे रससिद्ध कवि हैं। सुकृती हैं।

❖ ❖ ❖

9.
परिशिष्ट

पोषक

कविद्वय के 'नाना राजसंदर्शनम' ग्रंथ से संग्रहीत

1. श्री राजगोपाल कृष्ण याचेन्द्र
2. श्री मुद् कृष्ण याचेन्द्र, वेंकटगिरि संस्थान
3. श्री वेंकट कृष्ण याचेन्द्र
4. श्री गोडे गजपतिराव, विशाखपट्टणम
5. श्री राम भूपाल बहादुर, गद्वाल
6. श्री महाराजा आनंद गजपति, वियनगरम
7. श्री कोत्तपल्लि राव जग्गयारायणि
8. श्री चेलिकानि जगन्नाथ रायणिंगारू, चित्राड
9. श्री कलिदिंडि लक्ष्मी नृसिंह भूपाल, मोगलतुर्रू
10. श्री सीताराम भूपाल, आत्मकूर संस्थान
11. श्री चिन्नराय भूपाल, किर्लपूडि
12. श्री राव वेंकट सूर्याराव वीरम्वर
13. श्री काकर्लपूडि रामचंद्र राजु, कोट रामचंद्र पुरम
14. श्री महाराजा विक्रमदेव वर्मा, जयपूर संस्थानम (उत्कल)
15. श्री कृष्ण राय जमीन्दार, पोलवरम
16. श्रीमती लक्ष्ममांबा, उत्कल संस्थानम की जमींदारिणी
17. श्री वासुदेव राजमणि राजदेव, मंदसा
18. श्री रामेश्वर भूपाल, वनपर्ति
19. श्री रामचंद्रप्पाराव, नूजवीड
20. श्री भाष्यकार्लनायुडु, तोट्लवल्लूर
21. श्री बुड्डि वेंकट रेड्डि नायुडु, कृत्तिवेंटि
22. श्री वेंकट नारायण राव, मैलवरम
23. श्री राजा रावगंगाधर रामाराव बहादुर, धवलेश्वरम

24. श्री कृष्णराय जमीन्दार, गंपलगूडेम
25. श्री नारयप्पाराव, शनिवार पेट
26. श्री चेलिकानिजगन्नाथराव, तंगेल्लमुडि
27. श्री सत्यनारायण वर प्रसाद नृपति, सौतवल्लूर
28. श्री दामेर सीताराम राजा, काट्रावुलपल्लि
29. श्री वेंकट गिरि युवराज, मारूमंड
30. श्रीमंत राजा अंकिनीडु प्रसाद बहादुर, चल्लपल्लि
31. श्रीमती राव रामायम्मा, लक्ष्मी नरसापुरम की जमीन्दारिणी
32. श्री मुक्त्यालराजा
33. श्री बोब्बिलि महाराजा
34. श्री तेलप्रोल शोभनाद्रि अप्पाराव, नूजिवीडु
35. श्री अश्वाराव पेट जमीन्दार
36. मंत्रिप्रेगड भुजंगराव, एलूरू
37. राजा कोलंक जमींदार
38. राजा उय्यूर

10.
ग्रंथ-सूची

तिरुपति वेंकट कवुलु की कृतियाँ

(तिथियाँ कृति के प्रारंभ का काल सूचित करती हैं)

(क) संस्कृत में मौलिक कृतियाँ

1.	धातुरत्नाकरचंपू	1889-93
2.	श्रृंगार श्रृंगाटक	1891
3.	काली सहस्रम (300 श्लोक)	1891-94
4.	मूलस्थानेश्वर स्तुति	1893-94
5.	अष्टक (कालिकादिस्त्रोत्र)	1889-90
6.	शुक रंभा संवादम	1893-94
7.	नमश्शिवाय स्त्रोत्रम	
8.	क्षमार्पणम	
9.	पिष्टपेषणम	1914-15
10.	शलभालापनम	

(ख) संस्कृत काव्यों के अनुवाद-

11.	देवी भागवतमु	1896
12.	शिवलीललु (आंध्र स्कंदमु)	
13.	पुराण गाथलु	1896-97
14.	व्रतकथलु	
15.	श्रीनिवास विलासमु	
16.	रसिकानंदमु (27 पद्य)	1893-94
17.	शुकरंभासंवादमु	1893-94
18.	बुद्ध चरितम	1899-1900
19.	वैराग्यशतकमु (अप्पय्य दीक्षित)	

नाटक

20.	बालरामायणमु (राजशेखर)	
21.	मुद्राराक्षसमु (विशाखदत्त)	
22.	मृच्छकटिकमु (शूद्रक)	1901-1912 के मध्य काल में

(ग) अंग्रेजी से अनुवाद

23.	रवींद्रनाथ की कहानियाँ	

गद्य

24.	विक्रम देव चरित्र	1901-1912 के मध्यकाल में
25.	चंद्रप्रभाचरितम	
26.	हर्ष चरित्र	

(घ) तेलुगु में मौलिक कृतियाँ - काव्य

27.	श्रवणानंदमु	1893-97-1897-98 में संशोधित
28.	पाणिग्रहीत	
29.	लक्षणा परिणयमु	1897-1901
30.	एलामहात्म्यमु	1898-1900
31.	जातकचर्य	1899-1930
32.	इटीवलिचर्य	1930-1950
33.	दिवाकरास्तमयमु	1920
34.	जार्ज पट्टाभिषेक पद्यालु	1912
35.	बोब्बिलि पट्टाभिशेक काव्यमु	1929
36.	कामेश्वरी शतकमु	1901
37.	आरोग्य कामेश्वरी स्तुति	1922
38.	आरोग्य भास्कर स्तवमु	1929-30
39.	मृत्यंजय स्तवमु	
40.	सौभाग्य कामेश्वरी स्तवमु	1938-41
41.	शिवस्तवमु	
42.	भक्ति	
43.	गोदेवी	
44.	पतिव्रता	
45.	सुशीला (1941) प्रथम संस्करण	
46.	पूर्व हरिश्चंद्र चरितमु	
47.	दैवतंत्रमु	

शोकगीत

48. सतीस्मृति (वेंकटशास्त्री की पत्नी की मृत्यु पर)
49. कृष्ण निर्याणमु (पोलवरम राजा की मृत्यु पर)
50. सूर्य नारायण स्तुति (1920 तिरूपति शास्त्री)
51. पोलवरम राजा की शनि महर्दश 1918
52. सुखजीवि (ईदरवेंकटराव के प्रति)
53. गीरतमु विवादास्पद साहित्य के प्रमुख कृतियों की संख्या 53, 61 से 65. व्यंग्य काव्य विवादास्पद काव्यों से संबन्धित है। ये ग्रंथ 1909-1912 के मध्य काल में लिखे गये है।
54. तिरुपति वेंकटेश्वरार्धशतकमु
55. बिडालोपाख्यानमु, वेलूरि शिवराम शास्त्री के नाम से प्रकाशित (तिरुपति शास्त्री)
56. ग्रामसिंहमु
57. व्यास निष्कासनमु (वेंकट शास्त्री)
58. पाशुपतमु (वेंकटशास्त्री)
59. पुरश्चरणमु (वेंकटशास्त्री)
60. श्रृंखला तृणीकरणमु (वेंकटशास्त्री)
61. गुटूर सीम
62. रासभकुमारुडु
63. संगदोषमु
64. चेल्लपिल्ल जयंति
65. दिव्यतिरूपति

अन्य छोटी कृतियाँ (संकलन)

66. शनिग्रहमु 1897
67. मल्लेश्वर विज्ञप्ति 1922
68. शिवशंकर विज्ञप्ति
69. शतावधान सारमु
70. नाना राज संदर्शनमु
71. कलगूर गंप (प्रकीर्णक)

नाटक मौलिक (तेलुगु में)

72. पंडित राजमु
73. एड्वर्ड पट्टाभिशेकम नाटकमु
74. पांडव जननमु

75. पांडव प्रवासमु
76. पांडव राजसूयमु 1901 - 1917
77. पांडवोद्योगमु
78. पांडव विजयमु
79. पांडव अश्वमेधमु
80. अनर्ध नारदमु
81. दंभवामनमु
82. सुकन्या
83. प्रभावती प्रद्युम्नमु 1920-1922
84. गजानन विजयमु 1901-1912
85. व्यसन विजयमु
86. सौवर्ण पात्रिकमु
87. जीवनानंदमु असंपूर्ण

प्रहसन

88. पल्लेटूल्ल पट्टदललु
89. अपूर्व कविता विवेचनमु
90. त्रिलोकी विजयमु
91. कविसिंह गर्जितमुलु
92. रसा भासमु
93. तविटिगोट्टु

गद्य

94. भारतवीरुलु
95. विक्रम चेल्लपिल्लमु
96. षष्टिपूर्ति
97. सतीजातकमु
98. कवित्वमु अंटे?
99. श्रृंगार रसमु
100. भारत विशेषालु
101. पश्याम् पुश्याम् आलोचना

तिरुपति वेंकट कवुलु पर अन्य लेखकों की और कृतियाँ

1. तिरुपति कवुलु साहित्य समीक्ष (शिष्टा लक्ष्मीकांत शास्त्री, निर्मला प्रकाशन, विजयवाडा
2. विकास लहरि (दिवाकर्ल वेंकटावधानि का भाषण, युव भारति, किंग्सवे, सिंकदराबाद
3. साहित्योपन्यासमुलु सं. 10 (शतवार्षिकी व्याख्यान-तिरुपति वेंकट कवुलु पर भाषणमाला, आंध्र प्रदेश साहित्य अकादमी, कलाभवन सैफाबाद, हैदराबाद
4. तिरूपति वेंकट कवुल कवितावैभवमु जि. वि. सुब्रह्मण्यम, युवभारती , किंग्सवे, सिंकदराबाद